राजसमन्द झील

क्र.सं.	विवरण	पृष्ठ संख्या
1.	प्रस्तावना	284
2.	इतिहास के पृष्ठों से	285–288
3.	तीसरे मण्डप में स्थित बावड़ी, राजसमन्द की नौ–चौकी पर ज्योतिष गणना–सूर्य घड़ी, दयालशाह किला, राजसमन्द झील स्वरूप वर्ष 1910	289
4.	इतिहास के अन्य पृष्ठों से – महाराणा राज सिंह, राजसमन्द झील–दयालशाह जैन मन्दिर एवं घेवरमाता मन्दिर	290
5.	द्वारिकाधीश मन्दिर–कांकरोली, समीक्षा एवं सुझाव	291
6.	राजसमन्द झील–वर्तमान स्वरूप एवं विकास की संभावनाएँ	292–293
7.	गोमती नदी, छलकती झील है या नौ–चौकी आँसुओं का सैलाब, राजसमन्द झील वर्ष 2001 स्वरूप	294
8.	तीन बार छलकी राजसमन्द झील	295
9.	राजसमन्द के अन्य महत्वपूर्ण जल स्रोत–बाघेरी का नाका	296
10.	नन्दसमन्द बाँध	297
11.	अमरजोक तालाब	298

राजसमन्द झील का अति मनोहारी दृश्य

राजसमन्द झील

प्रस्तावना : यह झील उदयपुर क्षेत्र की पाँच महत्वपूर्ण एवं प्रसिद्ध झीलों में सम्मिलित है। महाराणा राजसिंह ने वर्ष 1665 में अकाल राहत के लिए इस विशाल कलात्मक झील का निर्माण करवाया था। यह झील उदयपुर के उत्तर में 66 कि.मी. दूर राजनगर एवं कांकरोली कस्बों के मध्य स्थित है। इस झील की पाल की लम्बाई 309 मीटर तथा चौड़ाई 64 मीटर है। अन्दर की तरफ से वर्तमान में इसकी ऊँचाई करीब 16.80 मीटर है एवं इस झील का पानी लगभग साढ़े चार वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैलता है। इस झील का उपयोग गत शताब्दी में लन्दन–सिड़नी वायु मार्ग में जल, थल में उतरने वाले हवाई जहाजों के बन्दरगाह के रूप में होता था। इस झील की पाल को ''नौ–चौकी'' कहा जाता है, जिस पर बनी संगमरमर की छतरियों में बारीक खुदाई का कार्य स्थापत्य कला का एक उत्तम उदाहरण है। इन छतरियों के पास शिलालेख भी है। झील के किनारे द्वारकाधीश का प्रसिद्ध मन्दिर और जैन धर्मावलम्बियों का दयालशाह तीर्थ स्थित है। इस झील का जलग्रहण क्षेत्र 523 वर्ग किलोमीटर एवं भराव क्षमता 107.25 मिलियन घनमीटर है।

राजसमन्द झील	
स्थिति	उदयपुर से उत्तरी तरफ
निकटस्थ गांव/तहसील/शहर	कांकरोली
देशान्तर	73° 54′00′′ पूर्वी देशान्तर
अक्षांश	25° 03′00′′ उत्तरी अक्षांश
नदी/नाला	गोमती (बनास की सहायक)
मुख्य बहाव क्षेत्र	बनास बेसिन
निर्माण समाप्ति वर्ष	1671
बाँध का प्रकार	चिनाई बाँध (दोनों तरफ दीवार)
शुद्ध जलग्रहण क्षेत्र	432.86 वर्ग किलोमीटर
सकल जलग्रहण क्षेत्र	523.18 वर्ग किलोमीटर
औसत वार्षिक जल आवक	20.97 एमसीएम
सकल जल भराव क्षमता	107.21 एमसीएम
शुद्ध जल भराव क्षमता	98.71 एमसीएम
पूर्ण जलाशय स्तर	559.31 मीटर
अधिकतम् जल स्तर	560.83 मीटर
सील लेवल	550.16 मीटर
टैंक बंध स्तर	563.27 मीटर
पूर्ण टैंक गेज	9.14 मीटर/30 फीट
स्तर – जीटीएस/आर्बिटरी	जीटीएस
पाल की लम्बाई	309 मीटर
पाल की चौड़ाई	64 मीटर
सतही क्षेत्रफल	16.50 वर्ग कि.मी.
औसत गहराई	11 मीटर
अधिकतम् गहराई	18.71 मीटर
टापू	01
समुद्रतल से ऊँचाई	559.31 मीटर
अधिशेष जल निकास व्यवस्था :	
– डिजाइन अधिकतम् प्रवाह	1622.56 क्यूमेक
– वीयर का प्रकार व लम्बाई	(2) ब्रोड क्रिस्टेड वियर – 406 मी (3) बाय वॉश – 72 मी.
कृषि योग्य कमाण्ड क्षेत्र	10441 हेक्ट.
गहन खेती योग्य क्षेत्र	7309 हेक्ट.
सकल कृषि कमाण्ड क्षेत्र	14225 हेक्ट.

स्त्रोत : जल संसाधन विभाग

''ऐ खुदा रेत के सेहरा को समन्दर कर दे, या छलकती हुई आँखों को पत्थर कर दे।''

उक्त गज़ल की ये पंक्तियाँ हमारी खूबसूरत झील को लगे वक्त के थपेड़ों को बखूबी बयां करती है। जब वह सूखी तो उसकी रूह ने समन्दर होने की दुआ की होगी या बदकिस्मती पर छलकते अश्कों को पत्थर हो जाने की गुहार भी लगाई ही होगी। कल वह सेहरा थी, आज समन्दर है। इठलाती, झूमती, गुनगुनाती। बहकती सी... महकती सी। अभी हवाओं में, फिज़ाओं में उसकी खूबसूरती की सरगोशियाँ हैं। राजसमन्द झील के पहलू में आज हर कोई वक्त बिताना चाहता है।

इतिहास के पृष्ठों से : राजसमन्द तालाब राजनगर में उदयपुर से लगभग 66 किलोमीटर उत्तर पूर्व में 25°4′ उत्तरी अक्षांश और 73°52′ पूर्वी देशान्तर पर स्थित हैं। महाराणा राजसिंहजी प्रथम ने जब राजसमुद्र और पहाड़ पर राजमन्दिर महल बनवाए, तब अपने नाम पर राजनगर शहर बसाया, जो तालाब की पाल से 1 मील पश्चिम में है। यहाँ काले और सफेद संगमरमर के पत्थर की खाने हैं। यह संगमरमर बहुत मजबूत और अच्छा है। राजसमुद्र तालाब की पाल और पहाड़ पर स्थित महल इसी संगमरमर के बने हुए हैं।

इस तालाब की लम्बाई लगभग 4 किलोमीटर, चौड़ाई लगभग 2.5 किलोमीटर एवं गहराई 17 मीटर है। इस तालाब का मुख्य जल स्रोत गोमती नदी है। ऐतिहासिक स्रोतों से यह पता चलता है कि राजसमुद्र तालाब जहाँ स्थित है, वहाँ महाराणा अमरसिंहजी ने पहले गोमती नदी को बाँध कर तालाब बनवाने का विचार किया था किन्तु महाराणा अमरसिंहजी के काल में वहाँ बाँध नहीं बनवाया जा सका और वि.स. 1718 माघ वदी 9 (ई.सं. 1662 ता. 18 जनवरी) में महाराणा राजसिंहजी ने राजसमुद्र नामक तालाब को बनवाने का कार्य प्रारम्भ किया। वि.सं. 1732 माघ सुदी 15 (ई.स. 1676 ता. 1 फरवरी) में इस तालाब का बाँध बनकर तैयार हुआ। 14 जनवरी, 1676 ई.सं. से सात दिन के वृहद् समारोह के साथ माघ शुक्ला पूर्णिमा बृहस्पतिवार वि.सं. 20 जनवरी, 1676 ई.सं. के दिन राजसमुद्र तालाब के बाँध की प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई। उस वक्त महाराणा राजसिंहजी प्रथम ने अपनी पटराणी और कुँअर के साथ सुवर्ण का तुलादान किया। इस तालाब को बनाने में कुल रु. 1,05,47,584 खर्च हुए, जिनमें रु. 39,64,623.50 तो तालाब बनाने में लगे और बाकी के इनाम, दान, पुण्य एवं जलसे में खर्च हुए और दूर–दूर के राजा लोगों को महाराणा ने हाथी, घोड़े, सरोपाव भेजे।

इस झील के पूर्वी भू–भाग में स्थित केलवा एवं उसके आसपास के गाँवों की पहाड़ियों एवं कृषि भूमि में स्थित मार्बल का दोहन प्रारम्भ हुआ तथा इसके फलस्वरूप इस क्षेत्र से प्राप्त वर्षा जल अब मार्बल की इन खानों में ही समाहित हो रहा है। साथ ही मार्बल खनन के समय भी पानी भारी मात्रा में उपयोग किया जाता है। विश्व–प्रसिद्ध एवं पुरातत्व महत्व की यह झील पिछले 46 वर्षों में मात्र तीन बार वर्ष 1973, 1975 एवं 2017 में ही छलकी है। यदि इस झील को राजसमन्द जिले के पर्यटन स्थल के रूप में विकसित करना है तो इस झील के जल उपयोग पर पुनः चिन्तन एवं मनन की आवश्यकता है।

राजसमन्द झील के मुख्य स्रोत :
इस झील को भरने के लिए गोमती नदी और खारी फीडर मुख्य स्रोत है।

राजसमन्द झील – भव्य स्थापत्य कला : राजसमन्द झील की पाल नौ–चौकी बहुत विस्तृत एवं व्यवस्थित रूप से निर्मित है। बहुत सुन्दर वृत्ताकार, तोरणद्वार एवं छतरियाँ जो नौ–चौकी के नाम से प्रसिद्ध हैं, इनमें बहुत खूबसूरती से सूर्य, रथ, सृष्टिकर्त्ता, देवी–देवताओं की कलाकृतियाँ संगमरमर पर बनी हुई हैं। मेवाड़ का इतिहास 27 संगमरमर स्लेब पर (1017 छन्द/पद) खुदा हुआ है, उन्हें राज प्रशस्ति के नाम से पुकारा जाता है। यह भारत की सबसे बड़ी नक्काशियों में से एक है।

इतिहास के पृष्ठों से : यह बाँध बँधवाकर निर्मित किया गया है। दोनों पहाड़ियों के बीच में जो बांध निर्मित किया गया है, उसकी पूर्व से पश्चिम की तरफ पाल की लम्बाई 1015 फुट और उत्तर दक्षिण की चौड़ाई 210 फुट है। अन्दर की तरफ से इसकी ऊँचाई वर्तमान में 55 फुट है। इस विशाल बाँध के कारण लगभग 4.5 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्रफल में पानी फैलता है जिसकी मात्रा करीब 220 लाख घनफुट है। इसका पूर्वी मुख्य बाँध 3.2 कि.मी. ऊपर से लम्बा है। राजसमुद्र के तालाब के बाँध को नौ–चौकी कहा जाता है। इस बाँध को नौ–चौकी इसलिये कहा जाता है कि इस पूरे बाँध की लम्बाई में ऊपर से नीचे सीढ़ियों के बीच की जगहों में एक के बाद दूसरे अधिक विस्तृत होते गये। भिट्ट युक्त ये नौ–चौकी परिधियाँ अथवा चौकियाँ तीन स्थानों पर बनी हुई हैं जिनका योग नौ आता है, इन नौ परिधियों अथवा चौकियों के कारण ही इस बाँध को नौ–चौकी कहा जाता है। इस बाँध का यह नौ–चौकी नाम लोक परम्परा का है, शास्त्रीय नहीं है। शास्त्रीय परम्परा में राजसमन्द का बाँध एक तरफ सीधा बंधा होने तथा एक भद्र का ही होने से भद्र संज्ञक तालाब है।

नौ–चौकी नामक इस बाँध के कुण्ड या सीधी सपाट सीढ़ियों के अन्तिम स्तर पर नीचे पश्चिम से पूर्व की तरफ क्षितिज लम्बाई में प्रत्येक परिध या चौकी, जो ऊपर से नीचे उतरती हुई तीन–तीन चौकियों के क्रम में सबसे बड़े आकार की हैं, उन पर माड (मण्डप) बने हुए हैं जिन्हें अधिकांश कला समीक्षकों व इतिहासविज्ञों ने छतरियाँ अथवा बारादरियाँ कहा है।

नौ–चौकी नाम से विश्रुत राजसमुद्र की यह पाल, उसके घाटों, घाटों की सीढ़ियों और सीढ़ियों के बीच में बने परिधों तथा घाटों के आजू–बाजू बने परिधों के ताकयुक्त मिट्टों की निर्माण प्रक्रिया की दृष्टि से भी अनोखी है। इस पाल के घाट की सीढ़ियाँ जिन्हें भारतीय स्थापत्य परंपरा की संज्ञाओं में 'कुण्ड' कहा जाता है, नौ–नौ की संख्या समूह में हैं। ऊपर से नीचे तीन–तीन समूहों को मिलाकर इस पाल के कुण्ड भाग बने हैं। इस प्रकार इस पाल के कुण्ड भाग में ऊपर के परिध के पश्चात् पूर्व से पश्चिम की तरफ क्षैतिज स्थिति में बनी नौ सीढ़ियाँ, फिर परिध, फिर इसी प्रकार बनी नौ सीढ़ियाँ फिर परिध और फिर इसी रीति से बनी नौ सीढ़ियाँ विद्यमान हैं। इस प्रकार पूर्व पश्चिम दिशा में घाटों पर सत्ताईस–सत्ताईस सीढ़ियाँ बनी हैं। इसके पश्चात् कुण्ड की सीढ़ियों का क्रम बदल गया है। इन सत्ताईस सीढ़ियों के पश्चात् पूर्व में पश्चिम दिशा की तरफ बढ़ने वाली सीढ़ियों के स्थान पर मकानों की दीवार में बनाये जाने वाले जीने की तरह ठोस निर्मिति की छोटी सीढ़ियाँ बनी हैं जो दिशा की दृष्टि से उत्तर–दक्षिण में निर्मित है तथा उन पर होकर तालाब के पानी तक जाने के लिए पूर्वाभिमुख अथवा पश्चिमाभिमुख होकर उतरना होता है, ऐसी बनी इन सीढ़ियों की संख्या नौ–नौ ही हैं। इस प्रकार नौ–चौकी बांध की यह कुण्ड योजना भी विलक्षणता लिए हुए है। यही नहीं इस बांध की चौकियों की उर्ध्वाधर मिट्टों पर पूर्व–पश्चिम तथा उत्तर, तीनों तरफ ताकें बनी हैं। ऐसी 27 ताकें इस पाल पर दृष्टव्य हैं। जिनमें से तीन ताकों के सिवाय अन्यों में 3.5 × 2.5 फुट आकार की काले पत्थर की पच्चीस शिलाएँ (जिनमें से एक अनुपलब्ध) लगी हैं। इन पर महाराणा राजसिंहजी के आश्रित कवि तैलंग ब्राह्मण पं. रणछोड़ भट्ट द्वारा विरचित राजप्रशस्ति महाकाव्य उत्कीर्ण है। शिलाओं पर खोदा गया यह महाकाव्य विश्व की पाषाण शिलाओं पर उत्कीर्ण अद्यावधि उपलब्ध 25 सर्गों की सबसे बड़ी रचना है। राज–प्रशस्ति महाकाव्य में 1105 संस्कृत भाषा के श्लोक निबद्ध हैं तथा दो सोरठे डिंगल भाषा में विरचित हैं। यह मेवाड़ के राजनैतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास पर प्रकाश डालने वाला महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक स्रोत है।

नौ–चौकी नामक राजसमुद्र का यह बाँध उक्त विशेषताओं के अतिरिक्त इस सम्पूर्ण–स्मारक के नियोजन तथा विन्यास और इसके तीन मण्डपों के स्तंभों के विन्यास व उन पर किये तक्षण, मण्डपों की छतों पर किये गये तक्षण एवं मूर्ति–चित्रण तथा इन सबके स्थापत्य–कलागत संयोजन और पाल के विभिन्न भागों में बनी ताकों में प्रतिष्ठित पाषाण मूर्तियों के तक्षण की दृष्टि से विश्व की एक अनुपम रचना मानी जानी चाहिए। इसे यदि 'मिरिकल इन मार्बल' कह दिया जाए तो भी कोई अतिशयोक्ति नहीं है। इस स्थापत्य–स्मारक के निर्माण में कलाकृति की रचना के मूलभूत आधार–चारों प्रायोलन प्रेरणाएँ–उद्देश्य, स्वरूप, वस्तु एवं तकनीक, एक हो गए हैं। इस स्मारक के सम्पूर्ण संरचनात्मक गठन में उसके आकार, स्वरूप व स्थान के सन्दर्भ में पृष्ठभूमि, सह–सम्बन्ध तथा स्मारक के स्वरूप एवं देखने वाले की दृष्टि के विस्तार के सह–सम्बन्धों का इस खूबी से निर्वहन किया गया है कि 1015 × 210 फुट के विस्तृत क्षेत्र में निर्मित होते हुए भी इसमें अद्‌भुत एकात्मता दृष्टिगत होती है। उदाहरण स्वरूप राजसमुद्र की पाल पर बने तीनों मण्डप आयाताकार हैं तथा स्तंभों पर आधृत आयताकार सपाट छत से छाद्य हैं। इस कारण तीनों मण्डप सामान्य स्तर पर एक सरीखे नजर आते हैं, किन्तु इनमें आन्तरिक विविधता है। इस बाँध के पश्चिमी भाग के पहले मण्डप में स्तंभों की संख्या 12 है और मध्य तथा तीसरे पूर्वी भाग में बने मण्डप में स्तंभों की संख्या 16–16 हैं, फिर भी इन तीनों मण्डपों की रचना एक सरीखी नजर आती हैं। यही नहीं, इन तीनों मण्डपों के स्तंभों की रचना भी बड़ी विलक्षणता लिए हुए हैं। उनमें प्रयुक्त पत्थरों की संख्या नौ हैं तथा इन मण्डपों के स्तम्भ मध्यकालीन स्थापत्य ग्रंथों में उल्लिखित संरचना प्रक्रिया के अनुसार नीचे से चतुरस्त्र, फिर अष्टास्त्र, फिर षोडशास्त्र, फिर अष्टास्त्र एवं फिर सबसे ऊपर पुनः चतुरस्त्र हैं। फिर भी पहली दृष्टि में चतुरस्त्र नजर आते हैं।

राजसमुद्र का यह तालाब पूर्व एवं पश्चिम दिशा में स्थित दो पहाड़ियों के बीच रिक्त जगह में पक्की चुनाई का राजसमुद्र की पाल की निर्मितियों में विविधता में एकत्व का एक और तथ्य उल्लेखनीय है। राजसमुद्र की पाल पर बने मण्डपों के स्तंभों और छतों के आन्तरिक भागों पर जो तक्षण किया गया है, उसमें एक इंच के स्थान में भी कहीं पुनरावृत्ति नहीं है; स्तंभों पर बनाये गये बेल–बूटे एवं अन्य अलंकरण तथा छतों पर मूर्तियों व शिलापट्टों के रूप में बनाये गये भारतीय पौराणिक कथानकों के कई–कई अभिप्राय तथा समसामयिक जीवन की घटनाओं से सम्बद्ध कथानकों के मूर्ति चित्रण में, छतों के किनारों पर बनी कोरणियों, लुम्बिकाओं इत्यादि में तथा दो–दो स्तंभों के बीच लगाये गए उतरंगों में कहीं पर भी तक्षण में परिसज्जा के उपादान की पुनरावृत्ति नहीं हुई है। इतने विस्तृत तक्षण में एक इंच की जगह में भी अलंकरण–उपादान की पुनरावृत्ति न होना आश्चर्यजनक विलक्षणता है, जो आंशिक रूप में मेवाड़ भू–क्षेत्र में ही स्थित पन्द्रहवीं शताब्दी के स्मारक रणकपुर के 'नलिनि गुल्म–प्रासाद' के स्तंभों में दृष्टव्य है; अन्यथा अन्यत्र दृष्टव्य नहीं है। इतनी सूक्ष्मता एवं स्पष्ट विविधता के होते हुए भी राजसमुद्र की पाल पर बने स्तम्भ और उनके तक्षण तथा छतें और उनके तक्षण में अद्‌भुत साम्य एवं एकत्व दिखाई देता है। साधारण स्तर पर वहाँ जाने वाले दर्शकों को सम्पूर्ण निवेश एवं तक्षणकार्य एक–सा लगता है, उनमें विद्यमान विविधता की ओर इंगित करने पर ही वह आश्चर्यचकित होकर स्थान–स्थान पर विविधता उद्‌घाटित करने लगता है। राजसमुद्र की पाल पर निर्मित मण्डपों की छतों के संयोजन की विधि विलक्षणता युक्त है। यहाँ के दो मण्डपों की छतें अन्दर की तरफ से 12–12 भागों में विभक्त तथा पश्चिमी भाग के मण्डप की छत अन्दर से नौ भागों में विभक्त है। छतों के ये सभी भाग छोटी–छोटी विविध शिलापट्टियों से ढके गये हैं, जिन पर अन्दर की तरफ मूर्ति–चित्रण और अलंकरण किया गया है। मूर्ति–चित्रण और अलंकरण में सटीकता तथा विविधता लाने के लिए छत के एक–एक भाग में भी अलग–अलग आकार की, कोई सीधी–सपाट आयताकार, कोई तिकोनी, कोई चतुरस्र तथा कोई गोल शिलापट्टी रखी गयी है तथा उन्हें प्रास–प्रणाली को अपनाकर एक–दूसरे से इस तरह परस्पर संयुक्त किया गया हैं कि छत के विभिन्न भागों के मध्य की पट्टियाँ अधर लटकी–सी नजर आती हैं। इनका अधर में लटके हुए दिखाई देना जितना चमत्कारिक नहीं है, उतना एक ही छत की दो या तीन भिन्न–भिन्न शिलापट्टियों पर एक मूर्ति अथवा एक ही उपादान के विविध अंगों–भागों का तक्षण किया जाना और उनको छत पर अधर में इस तरीके से संयुक्त करना कि वे अपने स्वरूप की सम्पूर्णता को व्यक्त करने में एक ही पाषाण–पट्टिका पर उत्कीर्ण हो, ऐसा प्रभास उत्पन्न करने वाली नौ–चौकी के मण्डपों की छतें अत्यधिक आश्चर्यजनक हैं।

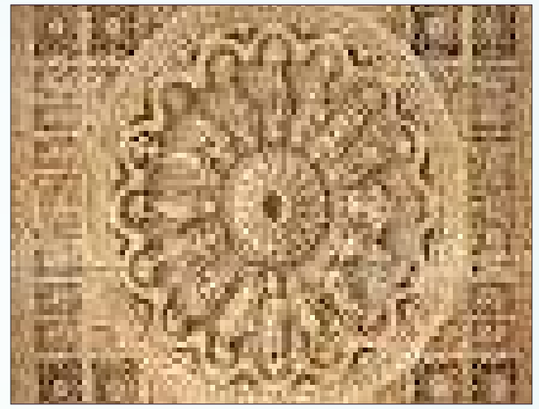

ऐसे मूर्त आभास को उत्पन्न कर पाना बस सत्रहवीं शताब्दी के मेवाड़ के शिल्पियों, स्थापत्यों एवं कलाकारों के बूते की ही बात थी। भारत की कला साधना में अभियांत्रिकी एवं भास्कर्य का ऐसा अद्‌भुत सामंजस्य अपने उच्चतम स्तर पर सम्पूर्ण उत्तरी भारत में महाराणा राजसिंहजी द्वारा बनवाये गए मात्र इस नौ–चौकी नामक तालाब के बाँध के मण्डपों में ही दृष्टव्य है। इसलिए इस स्थापत्य स्मारक को 'मिरिकल इन मार्बल' कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं है।

राजनगर की स्थानीय पहाड़ियों में ही उपलब्ध सफेद संगमरमर पत्थर से निर्मित इस स्मारक में कई स्थानों पर ऐसे शिलापट्ट भी लगे हैं जो मूलतः अपने सपाट आकार में एक पट्टी है, किन्तु उसे सपाट आकार में ही एक सिरे से दूसरे सिरे तक परस्पर बीच में संयोजक घुंडियों से जुड़ी हुई दो पट्टियों में विभक्त कर दिया गया है और फिर पट्टी के एक भाग पर मूर्तियाँ कोरी गई हैं। बेल–बूटे, फूल–पत्तियां एवं पौराणिक अभिप्रायों के कथानक उत्कीर्ण किये गये तथा सामाजिक जीवन की झांकियाँ खोदी गयी हैं। इसमें मेवाड़ के सत्रहवीं शताब्दी के कलाकारों की महानता, सूझबूझ एवं कला–साधना की अन्तिम परिणिति आत्म–विस्मृति झाँकती–सी नजर आती हैं। कला–साधना की पराकोटि की अवस्था को मूर्त–रूप से व्यक्त करने वाला राजसमुद्र का नौ–चौकी नामक यह बाँध सत्रहवीं शताब्दी की मूर्तिकला की कई विशिष्टताओं से युक्त है।

मेवाड़ की सत्रहवीं शताब्दी की मूर्तिकला सम्बन्धी अवशिष्ट सामग्री में 'नौ–चौकी' नामक राजसमुद्र बाँध की पाल पर बने तीन मण्डपों की छतों पर लगी मूर्तियाँ एवं इन मण्डपों का सम्पूर्ण भास्कर्य सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। इन मण्डपों का भास्कर्य कहीं पर भी देखें किसी भी भास्कर्य से उत्कृष्ट है। इन मण्डपों की छतों, स्तम्भों, फलकों, टोडों, उतरंगों तथा अन्दर के प्रत्येक भाग पर किया गया बारीक पतला किन्तु सौम्य तक्षण तथा अलंकारिक विस्तार अपनी कोटि का विशिष्ट है और कहीं–कहीं तो वह सौन्दर्य का स्वप्न सा लगने लगता है; और तब रणकपुर और आबू के देलवाड़ा के प्रासादों के भास्कर्य को पुनः तोलना पड़ता है; कारण कि नौ–चौकी के मण्डप के भास्कर्य को देखकर ऐसा लगने लगता है कि यहाँ पत्थर को काटा नहीं गया है, छीला नहीं गया है, तराशा नहीं गया है, उसे तो परिशुद्ध नमनीय धातु की तरह, जिस तरह चाहा, उस तरह से मोड़ दिया गया है और गीली मुलायम मिट्‌टी के पिण्ड से जितना जिस तरह का भाग सरलतापूर्वक अलग कर लिया जा सकता है, उसी सरलता से यहाँ पाषाण में से मनोवांछित भाग अलग कर लिया गया है। यह प्रतीति ही नौ–चौकी के मण्डपों के भास्कर्य की विलक्षणता है। वस्तुतः नौ–चौकी का भास्कर्य पाषाण में पुलकित अन्तस का आनन्द है।

राजसमुद्र झील में पानी का सागर हिलोरें लेता है तो उसकी पालके मण्डपों में सत्रहवीं शताब्दी की मात्र मेवाड़ की नहीं पूरे भारत की मूर्तिकला और भास्कर्य की अपार राशि लहराती है। पाल के तीसरे परिध के एक भाग में अमृत–मंथन और दूसरे भाग में गजेन्द्र मोक्ष का अभिप्राय उत्कीर्ण किया गया है। अमृत–मंथन अभिप्राय में पर्वत की मथनी, नाग की रस्सी के साथ देवता और दानवों के मूर्त्यांकन में पौराणिक कथानक के भावों का जितना सफल अंकन हुआ है और गजेन्द्र मोक्ष अभिप्राय में गज, मकर, भगवान विष्णु एवं सुदर्शन चक्र के अंकन में जितना वेग एवं संतुलन प्रकट हुआ है, उससे भी कहीं अधिक ओजस्वितायुक्त अंकन इन दोनों अभिप्रायों से सम्बद्ध पानी की लहरों के तक्षण में उभर कर आया है। इन अभिप्रायों में पानी की लहरों को एक के बाद दूसरी ऊपर आती आगे बढ़ती इस तरह बनाया गया है कि पाषाण में लहरों की वास्तविकता की प्रतीति होने लगती है। इसी परिधि के भिन्न–भिन्न भागों पर गोवर्धनधारण लीला, माखनचोर लीला, नृसिंहावतार, मारीच–वध इत्यादि अभिप्राय बड़ी कुशलता से कोरे गये हैं जिन्हें देखकर सहज में ही कथानकों का सम्पूर्ण घटनाचक्र स्पष्ट हो जाता है। इन अभिप्रायों से सम्बद्ध अभिव्यक्ति जिस गहनता एवं लयात्मकता से यहां हुई है, उसे शब्दों में व्यक्त किया जाना दुसाध्य है। ये कथानकों की अभिप्राय कथावस्तु के भावों को क्रम से प्रस्तुत कर सकने की सत्रहवीं शताब्दी के मेवाड़ मूर्तिकारों की पराकोटि की कुशलता को प्रकट करते हैं। पाल के तीसरे मण्डप में छत के ईशान कोण वाले भाग में रासलीला का अभिप्राय भी उत्कीर्ण है। इस अभिप्राय के तक्षण में मेवाड़ का शिल्प, कला और प्रविधि अपनी पूर्णता पार कर गयी है। यह अत्यधिक विलक्षण और आश्चर्यजनक रचना है। इस रचना में प्रत्यक्ष दिखाई देने वाली वस्तुस्थिति के अनुसार संगमरमर की शिलापट्टिका की पृष्ठभूमि के ऊपर रासलीला में भगवान श्रीकृष्ण एवं गोपिकाओं की लघु मूर्तियाँ लगाई गयी हैं और मध्य में एक चतुरस्र शिलापट्ट पर सहस्र दल कमल उत्कीर्ण है। मूर्त्यांकन के मध्य भाग का यह सम्पूर्ण चित्रण चतुरस्र और कुल पाँच शिलापट्टियों को एक साथ एक स्थान पर संयोजन करके बनाया गया है। इन पाँच शिलापट्टिकाओं के पीछे पुनः चारों ओर कोरणियों, पद्मलुम्बिकाओं तथा जालियों के लक्षण से युक्त चार शिलापट्टिकाएँ लगी हैं। यहाँ पाषाण पट्टिकाओं को प्रास–प्रणाली अपनाकर परस्पर जिस रूप में संयुक्त किया गया है, उसमें स्थापत्य, प्राविधिकी पराकाष्ठा को पार कर गया है। यही नहीं, इस अभिप्राय में चार शिलापट्टियों पर जो मूर्तियाँ अंकित हैं वे प्रत्यक्ष दृष्टि में पीछे की पृष्ठभूमि की पट्टियों के आगे अधर में लटक रही हैं, ऐसी प्रतीति होती है, किन्तु वास्तविकता यह है कि पृष्ठभूमि के रूप में दिखाई देने वाली शिलाएँ एवं ऊपर से लगाई गयी सी दिखाई देने वाली मूतियाँ एक ही पाषाण पट्टिका के भाग हैं। इस प्रकार की चमत्कारी रचना के निर्माण के लिए इन पाषाण–पट्टिकाओं को जैसा कि पूर्व में स्थापत्य कला के प्रसंग में स्पष्ट किया गया है, पहले सपाट स्थिति में दो भागों में एक सिरे से दूसरे सिरे तक बीच में से काटा गया हैं और दोनों भाग परस्पर जुड़े रहें, इसके लिए बीच–बीच में छोटी–छोटी जो दिखाई नहीं दे सकें, ऐसी घुंडियों जैसी जगह रखकर एक पट्टिका के, स्वचेष्टा से किए गए दो भागों को अलग नहीं होने दिया गया है; और फिर एक भाग पृष्ठभूमि के रूप में रखकर दूसरे भाग पर रासलीला अभिप्राय की श्रीकृष्ण और गोपिकाओं की भिन्न–भिन्न मुद्राओं–भावों की संतुलित अंग–विन्यास एवं दक्ष संधियोजन युक्त लगभग चालीस लघु–मूर्तियाँ तक्षित की गयी हैं।

इस प्रणाली से बनाई गयी एवं छत पर लगाई गयी ये मूतियाँ ऐसी दिखाई देती हैं जैसे कि वे अधर में अपने रासनृत्य में क्रम से आगे बढ़ने के लिए स्वतन्त्र लटकी हुई हैं। कथानक के अमूर्त अभिप्राय और भावों को (उपादान की कायिक चेष्टा एवं शारीरिक स्वरूप को नहीं) यथार्थ में परिणित करने के लिए मूर्तिकार के प्रत्यक्ष ज्ञान, मानसिक चेष्टा, हस्तलाघव एवं प्रज्ञा का एकत्व जो इस अभिप्राय के तक्षण में उद्‌घाटित होता है, वह अन्यत्र कहीं दृष्टव्य नहीं है। ऐसा यह एक नहीं, कई–कई अभिप्राय नौ–चौकी के मण्डपों में उत्कीर्ण हैं। उन्हें देखकर विचार आता है कि मूर्तिकारों ने कलाकृति के सृजन में अनुभूत की जाने वाली किन–किन वेदनाओं को अपने हृदय में किस प्रकार संजोये रखा होगा और जब अन्तस की पुकार के अनुरूप सृजन सम्पन्न हुआ होगा तो उन्हें कैसे अलौकिक आनन्द की अनुभूति हुई होगी। इसके बारे में बस यही कहा जा सकता है कि ऐसा सृजन कर कलाकार को बह्मानन्द की अनुभूति अवश्य हुई होगी। नौ–चौकी के मण्डपों के आन्तरिक भाग का प्रत्येक स्थल प्रगाढ़ आकर्षण वाले मूर्त्यांकन अथवा अलंकारिक सूक्ष्म तक्षण से युक्त है, जिनमें से प्रत्येक का विवेचन दुसाध्य एवं समयसाध्य है और यहाँ अपेक्षित भी नहीं है। फिर भी कतिपय का उल्लेख आवश्यक है।

नौ–चौकी के तीसरे मण्डप में पूर्व दिशा के एक स्तम्भ के मध्य भाग में नागपाश का अद्‌भुत अंकन है। इस स्तम्भ में लगभग 6×6 इंच के चौकोर हिस्से में एक ही नाग से किनारों पर चतुरस्र दिखाई देने वाला व कई–कई उलट–फेर वाली आंटियों व कुन्तलों वाला ऐसा नागपाश बना है कि जिसके कुन्तलों व आंटियों को गिना नहीं जा सकता तथा उसके प्रारम्भ और अन्त को नहीं ढूँढा जा सकता। इस नागपाश में ऊपर नाग का फैला फण स्पष्ट दिखाई पड़ता है, किन्तु वहाँ से प्रारम्भ करने पर आगे जो उलझे कुन्तल एवं आँटियाँ हैं, उनमें किस तरफ आगे बढ़ा जाए वह किसी भी स्थिति में निश्चित नहीं किया जा सकता। यह बड़ी रहस्मयी रचना है। ऐसी ही एक रहस्मयी सूक्ष्म रचना इसी मण्डप की छत के एक भाग के किनारे–किनारे किये गए अलंकरण में है। छत के किनारों का यह अलंकरण किसी पुष्प वल्लरी का है; किन्तु छत के चारों तरफ बनी इस वल्लरी के अन्तर्गत एक ओर के मध्य भाग में करबद्ध प्रणाम मुद्रा में एक खड़े हुए पुरुष की लगभग डेढ़ इंच की आकृति बनी है। इस वल्लरी में पुरुषाकृति का अंकन स्पष्ट एवं संतुलित है, किन्तु वल्लरी के साथ इसे जिस रूप में संयोजित किया गया है, उसके परिणामस्वरूप वल्लरी के अन्तर्गत अंकित पुरुषाकृति दर्शक को नजर नहीं आती, वह वल्लरी के पुष्प–पत्र के रूप में दिखाई पड़ती है। विशिष्ट तौर पर इंगित करने पर ही पुरुषाकृति नजर आने लगती है। इसी मण्डप की छत के एक दूसरे भाग में वल्लरी के चतुरस्त्र अलंकरण में लध्वाकृत्ति के दो लड़ते हुए हाथी दिखाये गये हैं जो कायिक–विन्यास की दृष्टि से पूर्णतया सन्तुलित हैं, किन्तु उन्हें ढूंढ़ पाना अत्यन्त श्रम साध्य है। छत के इस भाग में वल्लरी से आगे छत के मध्य भाग की ओर चारों दिशाओं के बीच में चार हाथी बनाये गये हैं, जिनकी कायिक संरचना अद्‌भुत एवं सन्तुलित हैं।

प्रत्यक्ष नजर न आ सकने वाला ऐसा एक उड़ता हुआ शुक भी इस मण्डप के एक स्तम्भ पर बने पुष्प झाड़ में अंकित है जिसे नीचे से ऊपर के क्रम से फैलते हुए झाड़ के ऊपरी भाग में खड़ा फैले हुए पंख में अंकित किया गया है। यह शुक सुस्पष्ट तक्षिक है, किन्तु झाड़ के साथ इस तरह से संयुक्त है कि उसे बगैर इंगित किए स्वतः अपनी ही नजर से ढूंढ़ पाना कठिन है। नौ–चौकी के ऐसे रहस्ययुक्त लक्षण के ये स्फुट उदाहरण हैं। ऐसे एक, दो या तीन नहीं सैंकड़ों दृश्य इन मण्डपों में स्तम्भों, छतों, उतरंगों, टोड़ों की लुम्बिकाओं, महलों इत्यादि में छिपे हुए हैं, जिन्हें अत्यधिक विलक्षण एवं आश्चर्यजनक रचनाएँ कहकर ही सन्तोष करना पड़ता है, ये क्या है, क्यों हैं, तथा किस प्रक्रिया को अपनाकर इतने सूक्ष्म रूप में तक्षित हैं, यह खोज एवं अनुमान के परे की बात है।

'नौ–चौकी' सत्रहवीं शताब्दी की मात्र मेवाड़ की नहीं, भारत की स्थापत्य और भास्कर्य की पराकोटि की रचना है। यहाँ के भास्कर्य में सरल से सरल एवं क्लिष्ट से क्लिष्ट तथा सहज से सहज एवं जटिल से जटिल अभिप्राय तथा अलंकरण दृष्टव्य हैं; किन्तु रचना चाहे सरल हो अथवा क्लिष्ट, सहज हो अथवा जटिल, उसके अंकन में उपादान के पीछे सन्निहित भाव को यथार्थ रूप देने में नौ–चौकी का मूर्तिकार जितना सफल हो पाया है, ऐसी सफलता अन्यत्र कठिनाई से ही ढूंढ़ी जा सकती है। इसका एक बहुत सरल उदाहरण नौ–चौकी के मण्डपों की छतों के विभिन्न चतुरस्र भागों के किनारों पर बनी कोरणियाँ, उनसे संयुक्त जालियाँ और उन जालियों से संयुक्त पद्म लुम्बिकाएँ हैं। ये कोरिणियाँ, जालियां व लुम्बिकाएं छत और दीवार के मिलन–स्थल पर पाषाण में कोरी नहीं गयी हैं। ये इन स्थलों पर छत के किनारे–किनारें लटकती हुई पूरी–पूरी बनाई गई हैं। इन कोरिणियों से संयुक्त जालियों को इस रीति से तराशा गया है कि उन्हें देखकर ऐसा महसूस होने लगता है कि इनकी रचना में पत्थर को काटा–छाँटा नहीं गया है, प्रत्युत पाषाण की बनी रस्सियों को बुन–गूंथकर ये जालियां बनाई गयी हैं और फिर उन पर पद्मलुम्बिकाएं लटकाकर उन्हें छत के किनारे–किनारे संयोजित किया गया हैं। इसीलिए इन जालियों को तक्षित नहीं बुनी गयी कहना अधिक उपयुक्त लगता है। इन कोरणियों, जालियों व पद्म लुम्बिकाओं में आबू के देलवाड़ा के प्रासादों एवं रणकपुर के प्रासादों की सी पतले तक्षण की तीक्ष्णता और तीव्रता तो नहीं है; किन्तु तक्षण के पतलेपन के साथ जिस गोलाई का निर्वाह यहाँ हुआ है, वह वर्णनातीत है, उसी ने इस स्मारक के सम्पूर्ण भास्कर्य में अद्‌भुत सौम्यता, श्लिष्टता तथा गांभीर्य उत्पन्न कर दी है। नौ–चौकी पर तक्षित होकर संगमरमर पाषाण बड़ा मृदु बन गया है, उसमें हाथीदांत की सी स्निग्धता और सीपी की सी चमक पैदा हो गयी है।

नौ–चौकी के भास्कर्य में श्रीकृष्ण एवं राम के जीवन से सम्बन्धित अभिप्रायों के अंकन का प्राधान्य है। अधिकांश मूर्त्यांकन श्रीमद्‌भागवत्, महाभारत एवं रामायण के कथानकों से सम्बद्ध है; किन्तु कहीं–कहीं भैरव, भवानी, नवग्रह, सूर्य, इन्द्र, इन्द्राणी, ब्रह्मा, शिव, शिशु–क्रीड़ा देवी कौमारी, ब्राह्मी, सरस्वती इत्यादि की मूर्तियाँ भी स्वतन्त्र शिलापट्टों में एवं परिसज्जा के साथ अंकित की गयी हैं। दूसरे अर्थात मध्य के मण्डप के एक भाग में शिव–ब्रह्मा एवं विष्णु को क्रमशः पार्वती, सावित्री एवं ब्रह्माणी के साथ नाव में बैठकर नौकायन करते हुए बताया गया है। इनके अतिरिक्त कीर्तिमुखों, अप्सराओं, सुर–सुन्दरियों, रमणियों, गन्धर्वों, संगीत–मण्डलियों, नृत्य–मण्डलियों, वाद्ययंत्रों, विविध प्रकार के पशु–पक्षियों, जलचरों और समसामयिक सामाजिक, सांस्कृतिक, राजसिक एवं सैनिक जीवन की कतिपय घटनाओं का भी मूर्त्यांकन यहाँ किया गया है। यह सम्पूर्ण मूर्त्यांकन लघु आकार की शिलापट्टिकाओं पर परिसज्जा के साथ उत्कीर्ण मूर्तियों के रूप में किया गया है, जिसे मेवाड़ के 'लघु–चित्रांकन' की तरह 'लघु–मूर्त्यांकन' कहा जा सकता है। सत्रहवीं शताब्दी के मेवाड़ के लघु चित्रांकन की तरह ही पाषाण में जो लघु मूर्त्यांकन एवं अति सूक्ष्म अलंकरण यहां हुआ है, वह इस नामकरण की सार्थकता प्रमाणित करता है।

नौ–चौकी के लघु मूर्त्यांकन से सम्बद्ध प्रत्येक मूर्ति और अलंकरण पूर्णतया संतुलित एवं प्रभावोत्पादक है। इनमें मेवाड़ की पहले से चली आ रही मूर्त्यांकन परम्परा का भी निर्वाह हुआ है। संतुलन, प्रभावोत्पादकता एवं परम्परा के निर्वाह को प्रकट करने वाली मूर्तियों में से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण दो मातृ–प्रतिमाएं हैं। ये अत्यन्त मनोहरिणी, पूर्ण अलंकारों–आभूषणों से युक्त शिशुक्रीड़ा, कौमारी व ब्राह्मी की हैं, जिसकी गोद में एक बालक है और नीचे ही वाहन मयूर और हँस उत्कीर्ण हैं। यह मेवाड़ में आठवीं से पन्द्रहवीं शताब्दियों की समयावधि में निर्मित की जाने वाली मातृ–प्रतिमाओं की परम्पराओं में निर्मित हैं। इन प्रतिमाओं के कानों एवं पाँवों के आभूषण पन्द्रहवीं शताब्दी तक की परम्परा के ही हैं; किन्तु गले में जो चन्द्रहार, तुलसी एवं यवहार अंकित किये गये हैं, उन्हें डॉ. जी.एन. शर्मा ने 1615 ई. की मेवाड़–मुगल संधि के पश्चात् मुगलों एवं मेवाड़ के महाराणाओं में होने वाले पारस्परिक आदान–प्रदान का प्रभाव माना है, जो उपयुक्त प्रतीत होता है; कारण कि इससे पहले की मूर्तियों में इस प्रकार के सपाट एवं गुँथे हुए गले के आभूषणों के अंकन का अभाव है।

पारम्परिक मूर्त्यांकन का प्रतीक एक और दृष्टान्त नौ–चौकी के मण्डपों में उत्कीर्ण एक सूर्यरथ है। इस सूर्यरथ का तक्षण आठवीं शताब्दी की परम्परा का द्योतक है। चित्तौड़गढ़ दुर्ग में आठवी शताब्दी में निर्मित सूर्य–मंन्दिर में ऐसे रथ का ढाँचा दृष्टव्य है। यही नहीं, नौ–चौकी के मण्डपों में संगीत–मण्डलियों एवं नृत्य–मण्डलियों सम्बन्धी शिलापट्टिकाओं के मूर्त्यांकन में भी प्राचीन परम्परा का निर्वाह स्पष्ट दिखाई देता है।

नौ चौकी के मूर्त्यांकन और भास्कर्य में नवीन प्रेरणाओं तथा उद्‌भावनाओं के दर्शन भी होते हैं। नौ–चौकी पर पशु–पक्षियों का मूर्त्यांकन भी बड़ा रोचक है। नौ–चौकी के दूसरे मण्डप के सामने वाली चौकी पर पशु–युद्ध के दृश्य उत्कीर्ण किये गये हैं। इनमें हाथी और हाथी, हाथी और घोड़ा, हाथी और बैल तथा मींडा और मींडा एक–दूसरे से युद्धरत प्रदर्शित किये गये हैं। इस प्रकार के पशु–युद्धों का मूर्त्यांकन सत्रहवीं शताब्दी के राजसिक आमोद–प्रमोद के व्यवहार को व्यक्त करता है जिसमें विषय–वस्तु तथा वेशभूषा में स्पष्टतः मुगल प्रभाव परिलक्षित होता है। पशुओं के साथ कुछ पुरुषों की अटपटी पगड़ी, चकदार जामा पहने और कुछ को साफा, चुस्त पजामा पहने दर्शाया गया हैं। इनमें से मींडो के युद्ध वाले दृश्य के साथ खड़े पुरुषों की नुकीली दाढ़ी भी बनाई गई हैं। यह अंक मुगल प्रभाव का परिचायक है। नौ–चौकी के मूर्त्यांकन में शिकार एवं युद्ध सम्बन्धी दृश्यों का भी मूर्त्यांकन किया किया गया हैं। शिकार के दृश्यों में शिकारियों के साथ कुत्ते भी बताये गये हैं। शिकार में कुत्तों का साथ रहना पारम्परिक न होकर मुगल प्रभाव का परिचायक है। नौ–चौकी बाँध के तीसरे मण्डप के सामने वाली चौकी पर कई प्रकार की मुद्राओं में हट्टस–पक्षियों को दाना चुगते, परस्पर क्रीड़ा करते, इधर–उधर झाँकते, एकटक दृष्टि से देखते इत्यादि विविध भावों में प्रदर्शित किया गया हैं।

यद्यपि इस चौकी पर उत्कीर्ण हँस अधिकांशतः अपने सहज रूप में ही अंकित हैं, किन्तु उनकी मुद्राओं मुख्यकर चेहरे, आँख व चोंच की मुद्राओं को मुगल शासकों के संरक्षण में बनवाये गये चित्रों के अनुरूप बनाया गया है। नौ–चौकी का, मुख्य आकर्षण यहाँ के मण्डपों का एक–एक पाषाण अमूल्य है, वर्णनातीत है, किन्तु दुर्भाग्य यह है कि पुरातत्व विभाग द्वारा संरक्षित स्मारक घोषित कर दिये जाने के बाद भी वह असंरक्षित है, असुरक्षित है। समसामयिक मूर्ति भंजकों के हाथों से तो वह नष्ट–भ्रष्ट नहीं हुआ था, किन्तु आधुनिक युग के अर्थलोलुपों के हाथों से वह नष्ट–भ्रष्ट हो रहा है। इसके संरक्षण की समुचित व्यवस्था किये जाने की महत्ती आवश्यकता है। मुस्लिम आक्रान्ता प्रायः हिन्दुओं की बनाई इमारतों को नष्ट–भ्रष्ट करते रहते थे परन्तु वि.सं. 1636 (ई.सं. 1679) में जब औरंगजेब महाराणा से युद्ध करने हेतु मेवाड़ आया, तब यहां आकर इस तालाब की शोभा एवं कारीगरी को देख उसकी हिम्मत इसको नुकसान पहुंचाने की न हुई और किसी प्रकार की खराबी न कर पीछे लौट गया। महाराणा सज्जनसिंहजी ने महल बनवाकर बाग लगाया। पाल के पूर्वी तरफ गेवरमाता का एक छोटा सा मन्दिर है। इसी तरफ पूर्वी पहाड़ी पर महाराणा राजसिंहजी प्रथम के प्रधान दयालशाह का बनाया हुआ जैन मन्दिर भी है।

तीसरे मण्डप में स्थित बावड़ी : यहाँ सफेद संगमरमर की बनी हुई एक बावड़ी महाराणा राजसिंहजी प्रथम की राणी चारुमति बाई की बनवाई हुई 30 हजार रुपयों की लागत की है। यह चारुमतिबाई रुपनगर (किशनगढ़) के राजा रुपसिंहजी की पुत्री थी, इसकी सुन्दरता की प्रशंसा सुनकर औरंगजेब ने उसके पिता को हुक्म दिया कि इसकी शादी हमारे साथ करो, उसको मंजूर करना पड़ा। चारुमतिबाई ने जब यह खबर सुनी तो आत्मघात करने आरूढ़ हुई। वैष्णव धर्म में होने से वह यवन से घृणा करती थी, उसका पिता भी नहीं चाहता था परन्तु क्या करें? अपनी पुत्री को कहा कि तमाम हिन्दुस्तान में औरंगजेब से मुकाबला केवल महाराणा राजसिंहजी प्रथम ही कर सकते हैं, मैं क्या कर सकता हूँ, अगर मैं लड़ाई करूं और मेरे पांच हजार राजपूत भी मारे जायेंगे तो भी औरंगजेब से जीत नहीं सकूंगा। मुझे एक उपाय दिखाई पड़ता है कि अगर तू महाराणा राजसिंह प्रथम के नाम अर्जी लिख देवें तो मैं एक रात में उदयपुर पहुंचा दूँ, उसमें यह लिख दें कि यवन मेरे साथ शादी करने आ रहा है, मैं यवन से स्पर्श होना चाहती नहीं और आपके चरणों में मैं अपना शरीर अर्पण करती हूँ, इसलिये आप जिस तरह से कृष्ण ने शिशुपाल से रूक्मणी की रक्षा की वैसे ही मेरी रक्षा करो, अगर नहीं करोगे तो मैं आत्मघात करूंगी वह पाप आपको लगेगा, इस अभिप्राय की अर्जी चारूमतिबाई ने लिख दी जिसको सांढनी सवार के साथ उदयपुर भेजी, महाराणा तो औरंगजेब के विरुद्ध ही थे, शीघ्र ही रूपनगर पहुंचकर चारूमतिबाई को शादी कर लाए तथा चारूमतिबाई ने यह बावड़ी बनवाई।

तीसरे मंडप में स्थित बावड़ी

राजसमन्द की नौ–चौकी पर ज्योतिष गणना – सूर्य घड़ी : राजसमन्द झील स्थित नौ–चौकी पर महाराणा राजसिंह के काल वि.स. 1732 माघ शुक्ल 15 (20 जनवरी, गुरुवार 1675) में निर्मित सूर्य घड़ी स्थित है। वि.स. 1732 में निर्मित पूर्वाभिमुखी यह धूप घड़ी प्रातः छह बजे से शाम छह बजे तक का समय ही दिखाती है। घड़ी का अध्ययन कर रहे विशेषज्ञ डॉ. विष्णु माली के अनुसार संभवतः उस निर्माण अवधि समय सूर्य दक्षिणायन से उत्तरायण पथ की ओर बढ़ रहा था। उस समय राजसमन्द में सूर्योदय का समय लगभग 5.45 से 6.00 बजे के मध्य रहा होगा। वर्तमान में मार्च माह में सूर्य घड़ी में एक घण्टे का अन्तर आ रहा है। इससे स्पष्ट होता है कि सूर्य की दिशा दक्षिणायन होने पर ही यह घड़ी 6 माह तक सही समय देगी। अभी तक राजस्थान में पूर्ण मानकीकृत सूर्य घड़ी सिर्फ जयपुर के जन्तर–मन्तर की सूर्य घड़ी को मान्यता मिली हुई है। मेवाड़ में राजसमन्द झील की नौ–चौकी पर सूर्य घड़ी के अतिरिक्त चित्तौड़गढ़ में फतहप्रकाश महल की छत पर और बिजौलिया में भी सूर्य घड़ियाँ मिली है।

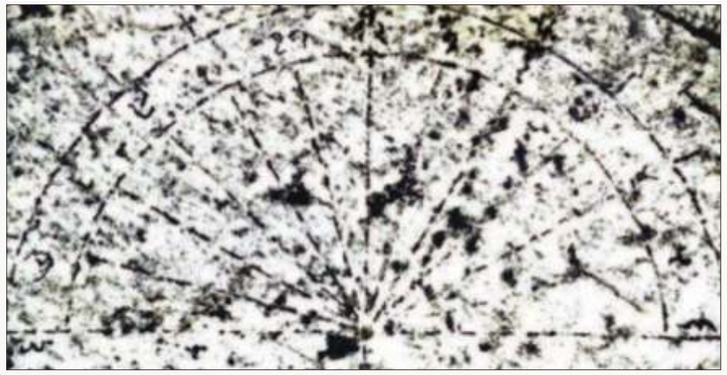

दयालशाह किला : राजसमन्द के मुख्य मार्ग पर एक ऊँची पहाड़ी पर दयालशाह नामक किला स्थित है। इस किले में स्थित प्रसिद्ध जिनालय में श्री आदिनाथ भगवान की 1.5 मीटर ऊँची चौमुखी श्वेत वर्ण की प्रतिमा कमल–मुद्रा में विराजित है। कहा जाता है कि ओसवाल वंश के महाराणा के वीर मंत्री श्री दयालशाह संघवी ने एक करोड़ रुपये खर्च कर इस भव्य मन्दिर का निर्माण कराया था। वि.सं. 1732 में वैशाख शुक्ल सप्तमी गुरुवार को आचार्य श्री विनयसागर सूरिश्वरजी के कर–कमलों से इसकी प्रतिष्ठा करवायी गयी। पूर्व में इस नौ–मंजिला मन्दिर का ध्वज 12 मील की दूरी से भी दिखाई देता था। औरंगजेब के शासनकाल में इस मन्दिर को किसी राजा का किला मानकर तोड़ा व नष्ट किया गया था। वर्तमान में इस मन्दिर की केवल दो मंजिलें ही शेष बची हुई दिखाई देती हैं। मन्दिर में कई भूमिगत कक्ष भी हैं। इसे मेवाड़ के पंच–तीर्थों में से एक माना जाता है।

मेवाड़ के इतिहास में दयालशाह की वीरता और उपलब्धियों का जिक्र मिलता है। उन्होंने मेवाड़ के महाराणा को मृत्यु से अपनी साधन सम्पन्नता, बुद्धिमत्ता एवं साहस से बचाया था और इस तरह वे महाराणा के सबसे प्रिय और विश्वसनीय मंत्री के पद तक पहुंचे थे। दयालशाह ने एक बार बादशाह औरंगेजब की सेना को करारी हार देने के बाद सोने के खजाने को ऊंटों पर लादकर महाराणा को उपहार के रूप में सौंप दिया। दयालशाह ने तब महाराणा से इस पहाड़ी पर एक मन्दिर बनाने की इच्छा व्यक्त की और महाराणा ने तुरन्त इसकी स्वीकृति प्रदान कर दी थी। इस प्रकार राजसमन्द के पूर्वी छोर पर स्थित ऊँची एवं विशाल पहाड़ी पर यह भव्य मन्दिर बनाया गया। इस पहाड़ी के ठीक सामने राजसमन्द झील के पश्चिमी छोर पर महाराणा का महल स्थित था।

प्रतिवर्ष भाद्रपद शुक्ल छठ पर यहां मेला लगता है। पहाड़ी पर स्थित धर्मशाला से मंदिर तक पहुंचने के लिए करीब 250 सीढ़ियाँ हैं। यहाँ ठहरने की सभी सुविधाओं के साथ एक भोजनशाला भी है। इसका रखरखाव एवं प्रबन्धन श्री ऋषभदेव भगवान की पेढ़ी द्वारा किया जाता है।

वर्ष 1910 के फोटोग्राफ के अनुसार राजसमन्द झील की पाल पर
किसी तरह का निर्माण नहीं हुआ था एवं पाल के प्रत्येक खण्ड में नौ संरचनाएँ हैं।

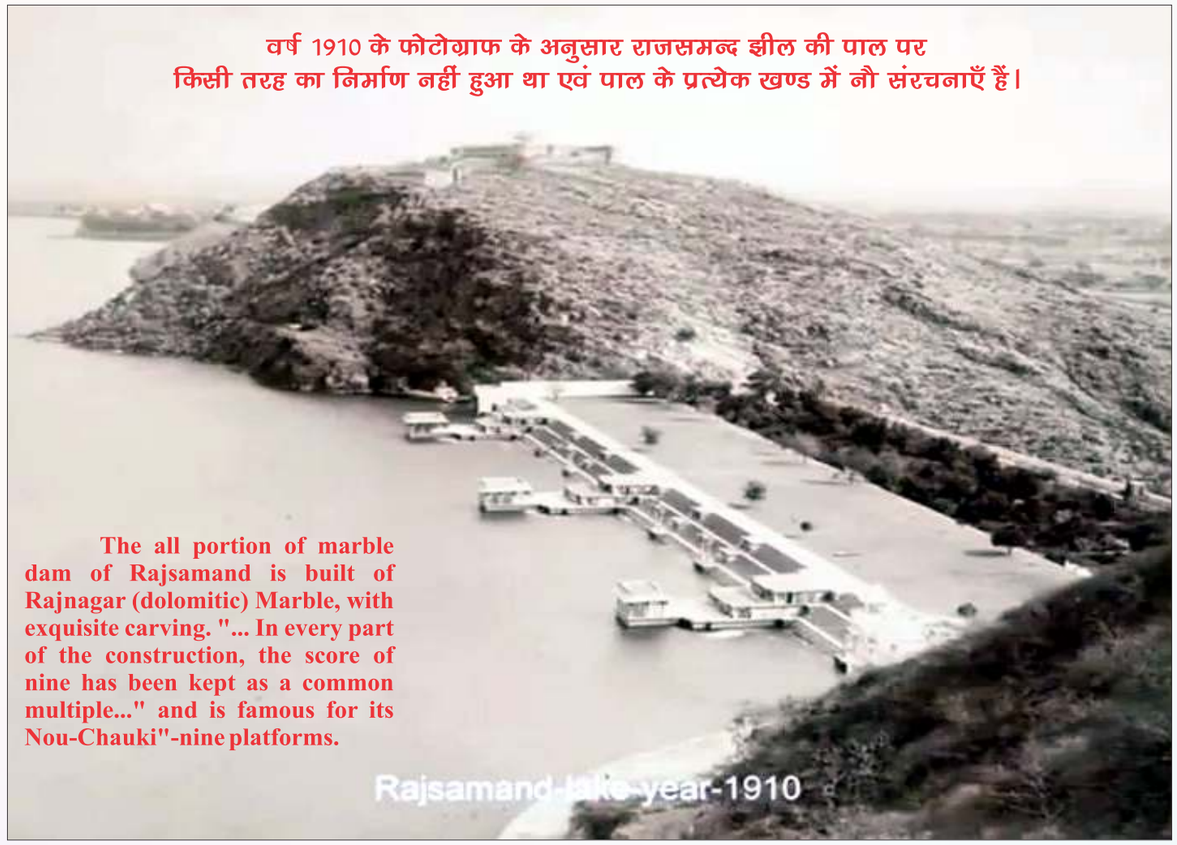

इतिहास के अन्य पृष्ठों से – महाराणा राजसिंह : महाराणा राजसिंह का जन्म वि.सं. 1688 कार्तिक कृष्ण 2 (12 अक्टूबर, 1631) को हुआ। महाराणा राजसिंह महाराणा जगतसिंह के जयेष्ठ पुत्र थे। जगतसिंह के देहावसान के पश्चात् राजसिंह वि. सं. 1709 कार्तिक कृष्ण 4 (22 अक्टूबर, 1652) को मेवाड़ की गद्दी पर बिराजे। वे एक कूटनीतिज्ञ शासक थे। दिल्ली सम्राट शाहजहाँ जब आयुवृद्ध हुए तो उनके बेटों (दारा, शुजा, औरंगजेब और मुराद) में आपस में मुठभेड़ हुई। प्रत्येक एक–दूसरे को मारकर गद्दी हथियाना चाहता था। उस समय महाराणा राजसिंह ने औरंगजेब का साथ दिया। राजनीति में दोस्ती और दुश्मनी के बीच लाईन बहुत पतली होती है। उसी औरंगजेब ने सल्तनत हथियाने के बाद महाराणा के अहसान को भूलकर मेवाड़ पर कई बार आक्रमण किये। महाराणा ने उन आक्रमणों का डटकर जवाब दिया। उन संघर्ष की श्रृंखला में रूपनगढ़ की राजकुमारी को विधर्म विवाह से बचाकर लाना, राजसमन्द और जनासागर झील का निर्माण, प्रभु श्रीनाथ जी एवं द्वारिकाधीश जी को मेवाड़ में संरक्षण देना, औरंगजेब द्वारा हिन्दुओं पर लगाये गये जजिया कर का विरोध करना, जोधपुर नरेश अजीत सिंह को संरक्षण देना एवं औरंगजेब के सिपहसालारों द्वारा तोड़े गये हिन्दु मन्दिरों के जवाब में कई मस्जिदें तुड़वाना, आदि राजसिंह का जीवन चरित्र रहा है। इन्हें पारिवारिक अन्तरंग षड़यंत्र का भी शिकार होना पड़ा, जिसके कारण इनके दो जवान पुत्रों की अकारण मृत्यु हो गई। विड़म्बना यह भी रही कि इनको अपने ही दरबारियों द्वारा भोजन में जहर दे दिया गया। वि.सं. 1737 कार्तिक शुक्ल 10 (3 नवम्बर, 1680) को उनका देहावसान हो गया।

राजसमन्द झील, दयालशाह जैन मन्दिर एवं घेवर माता का मन्दिर : राजसमन्द झील न केवल राजनगर अथवा राजसमन्द जिले का अपितु पूरे राष्ट्र का गरिमामय पर्यटन स्थल है। राजसमन्द झील एवं दयालशाह के किले (जैन मन्दिर) का निर्माण क्यों और किन कारणों से हुआ, इसका भी एक इतिहास है। वि.सं. 1698 में महाराणा राजसिंह का दूसरा विवाह जैसलमेर में हुआ। जैसलमेर से वापस आते वक्त वर्षा की अधिकता से गोमती नदी का बहाव बढ़ गया। इससे महाराणा को दो–तीन दिन यहाँ रूकना पड़ा, तब महाराणा ने विचार किया कि यहाँ पर एक तालाब बनाया जाना चाहिये। इनकी एक रानी ने अपने बेटे सरदार सिंह को युवराज बनाने के लिए बड़े कुँवर सुल्तान सिंह की तरफ से महाराणा को शक दिलाकर उनका चित्त कुँवर सुल्तान सिंह की तरफ से हटाया। महाराणा ने सुल्तान सिंह से नाराज होकर अपने गुर्ज (लोहे के भारी शस्त्र) से कुँवर सुल्तान सिंह का काम तमाम कर दिया। थोड़े दिनों बाद अपने पुरोहित को उसी रानी ने एक पत्र लिखा कि मैंने सुल्तान सिंह को तो फरेब से मरवा डाला, अब दरबार को भी जहर दे देना चाहिये जिससे कि मेरा बेटा राज्य का मालिक बन सके। पुरोहित ने उस कागज को अपनी कटारी की म्यान में रख लिया। पुरोहित के पास एक दयालनामी महाजन नौकरी करता था। उसकी शादी पास ही देवाली गांव में हुई थी। एक दिन त्यौहार पर पहर रात गये दयाल अपने मालिक से छुट्टी लेकर ससुराल जाने को था, रात होने की वजह से पुरोहित से एक शस्त्र मांगा। पुरोहित ने अपनी कटारी दे दी। रात को वह अपनी ससुराल गया, वहां कटारी को देखते समय कटारी म्यान से बाहर निकल आई और वह कागज गिर पड़ा। दयाल उस कागज को बाँचने लगा, बाँचते ही वहां से दौड़ा और उदयपुर आया। आधी रात के समय महाराणा को जरूरी काम की अर्ज के बहाने बुलाया और अपना परिचय देते हुए वह कागज नजर किया। महाराणा ने भीतर जाकर लोहे के गुर्ज से रानी का काम तमाम कर दिया और पुरोहित को भी बुलवाकर मार ड़ाला। कुँवर सरदार सिंह जो इस पूरे षड़यंत्र से बिल्कुल बेखबर थे, कुँवरपदे के महलों में ही जहर खाकर अपनी जान दे दी और

राजसमन्द झील, नौ–चौकी एवं दयालशाह जैन मन्दिर – ऑयल पेन्टिंग

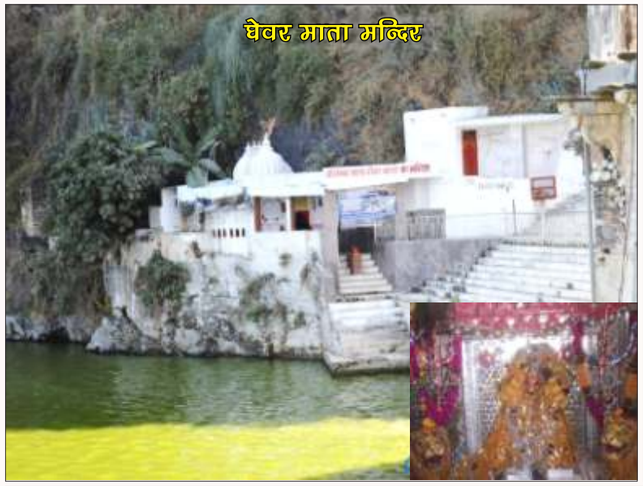
घेवर माता मन्दिर

राजसमन्द झील की पाल

द्वारिकाधीश मन्दिर

मरते समय यह दोहा लिख कर अपने सिरहाने रख दिया–''पाणी पिंड तणाह पिंड जाता पाणी रहे। चितारसी गणाह, सपना ज्यूं सरदार सी।।'' जिसका अर्थ है– ''इज्जत शरीर की है, परन्तु शरीर जाये और इज्जत बनी रहे तो उस आदमी को लोग ख्वाब की तरह याद करेंगे।'' कुँवर सरदार सिंह की पूजा शंभू निवास के पास कुँवरपदे के महल की छतरी में अब तक होती है और लोग उनकी बहुत सी करामाती बातों के ख्याल से उनको देवता के समान मानते हैं।

महाराणा ने उपर्युक्त लिखित बातों के पाप से छुटकारा पाने के उपाय ब्राह्मणों से पूछे, तब ब्राह्मणों ने धर्म रीति से तीन तदवीरें बतलाई – पहली यह कि सूखे हुए पीपल के पेड़ में बैठकर आग से जल मरना चाहिये, दूसरी कोई बड़ा तालाब बनाना जो आगे चलकर हजारों लोगों की रोजी–रोटी का साधन बन सके एवं तीसरी लड़ाई में मारा जाना। महाराणा ने पिछली दो बातें मंजूर की और इस कारण से राजसमन्द बनवाया। उस दयाल महाजन का दर्जा बढ़ाकर अपना प्रधान बना दिया।

वि.सं. 1722 बैसाख शुक्ल 13 को गोमती नदी को बांधने के लिए दोनों पहाड़ों के बीच पाल की बुनियाद ड़ालने का मुहूर्त हुआ। कृष्णगढ़ के राजा रूपसिंह की बेटी महारानी चारूमती राठौड़ ने राजनगर ग्राम के पश्चिम की तरफ सफेद पत्थर की बावड़ी बनवाई, जिस पर तीस हजार रुपये खर्च हुए। वि.सं. 1732 माघ शुक्ल 9 को राजसमन्द की प्रतिष्ठा की और शास्त्रानुसार लाखों रुपयों का दान ब्राह्मणों को दिया। जप–हवन के पश्चात् राजसमन्द की पूरी परिक्रमा करने के लिए महाराणा रानियों समेत पैदल चले। नौ–चौकी से मोरचणा, पसून्द, तासोल, भाणा और कांकरोली होते हुए 14 कोस के घेरे को पूरा किया। महाराणा ने अपनी पाटनी रानी और कुँवर समेत स्वर्ण तुला की। तालाब का नाम ''राजसमुद्र'', पहाड़ पर स्थित महल का नाम ''राज–मन्दिर'' और शहर का नाम ''राजनगर'' रखा गया।

इसके अतिरिक्त श्रुत इतिहास यह बताता है कि राजसमुद्र झील निर्माण के प्रारम्भ के तीन वर्षों में प्रतिवर्ष नदी वेग के कारण इसकी पाल ढ़ह गई। तब निर्णय हुआ कि किसी पतिव्रता महिला की बलि दी जावे तो ही यह पाल टिक पायेगी। जिस दयालशाह ने रानी का अन्तरंग पत्र लाकर राणाजी को दिया था, वह दयालशाह तब तक राणाजी का विशेष कृपापात्र एवं प्रधान बन चुका था। उसी को राना जी ने आदेश दिया कि कहीं से खोजकर पूर्ण रूपेण पतिव्रता महिला की बलि दिलवाने की व्यवस्था करावें। अन्ततोगत्वा दयालशाह की धर्मपत्नी घेवर देवी इस कार्य हेतु सहर्ष तैयार हो गई। मुहूर्त के दिन वह पद्मासन लगाकर नींव के अन्दर बैठ गई और उस पर पाल चुन दी गई। श्रुत इतिहास का प्रमाण राजसमन्द के साथ निर्मित घेवर माता का मन्दिर आज भी विद्यमान है, जहां शक्ति स्वरूपा घेवर माता की विविधत् पूजा बारह मास नियमित रूप से होती है। महाराणा ने स्वर्ण तुला का दान दिया, उसका बहुत बड़ा भाग दयालदास को दिया गया। उस धन से ही दयालशाह जैन मन्दिर के नाम से प्रसिद्ध है। दयालदास ही आगे चलकर दयालशाह कहलाया। उसका गौत्र सरूपरिया था। उदयपुर के सरूपरिया परिवार के अनुसार घेवर माता उनकी कुल देवी है। नौ–चौकी पर 25 मार्बल पत्थर पर उकेरित शिलालेख ''राज–प्रशस्ति'' इतिहास की एक अनुपम धरोहर है। नौ चौकी की छतरियों की शिल्पकला को देखकर कोई भी अभिभूत हुए बिना नहीं रहता है।

पूर्व में इस तालाब का पानी इतना स्वच्छ था कि सिक्का डालने पर पानी में दस फीट नीचे तक यह सिक्का साफ नजर आता था। पाल के पास की संपूर्ण जमीन पर बहुत सुन्दर बाग लगा हुआ था। यहां पहुचते ही गुलाब चमेली की महक मिलती थी। विड़म्बना यह है कि बीते सात दशकों में पर्यावरण को सुरक्षित नहीं रख पाने के कारण राजसमन्द ने बहुत कुछ खोया है और यह बाग तो पूरी तरह से उजाड़ हो गया है।

द्वारिकाधीश मन्दिर, कांकरोली : राजसमन्द झील के दक्षिणी–पूर्वी किनारे शांत, निर्मल एवं सुकून भरे वातावरण में द्वारिकाधीश मन्दिर स्थित है। वल्लभाचार्य सम्प्रदाय के भक्त इस मन्दिर में भगवान श्रीकृष्ण की कई रूपों में पूजा कर तनावमुक्त एवं आत्म–शांति प्राप्त करते हैं। यह मन्दिर कांकरोली कस्बे में उदयपुर से 65 कि.मी. की दूरी पर स्थित है एवं इसका धार्मिक दृष्टि से विशेष महत्व है। इस मन्दिर ने दुनिया के विभिन्न हिस्सों से लाखों भक्तों एवं पर्यटकों को आकर्षित किया है।

यहाँ भगवान श्रीकृष्ण की लाल पत्थर की प्रतिमा की पूर्ण भक्ति और समर्पण के साथ स्तुति की जाती है। कई लोगों का मानना है कि भगवान श्रीकृष्ण की यह प्रतिमा महाराणा राजसिंह प्रथम द्वारा वर्ष 1671 में मथुरा से लाई गई थी।

महाराणा राजसिंह प्रथम ने 1676 ईस्वी में इस मन्दिर का निर्माण राजसमन्द झील के उद्घाटन के समय करवाया गया था। वल्लभाचार्य के पोते श्री बालकृष्ण जी ने भगवान श्रीकृष्ण और उनकी मूर्ति की देखभाल की जिम्मेदारी ली, तब से यह मन्दिर वल्लभाचार्य एवं वैष्णव पंथ के अनुयायियों के लिए सबसे महत्वपूर्ण पूजा केन्द्रों में से एक बन गया है। यह मन्दिर वैष्णव और वल्लभाचार्य सम्प्रदाय का है। इसका अन्य सभी वल्लभाचार्य मन्दिरों में सर्वोच्च स्थान है।

सर्वप्रथम श्री द्वारिकाधीश का यह मन्दिर कांकरोली के समीप ग्राम आसोटिया में बनवाया गया था। संवत् 1751 में भारी वर्षा के कारण आसोटिया मन्दिर में बाढ़ आ गई, जिससे मन्दिर एक टापू बन गया था। इस परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए महाराज कुमार श्री अमरसिंह द्वितीय ने नवीन मन्दिर के निर्माण के लिए झील के किनारे दरीखाना और हवेली की पहाड़ी पर भूमि आवंटित की। नए मन्दिर के निर्माण के बाद इस स्थान का नाम गिरिधरगढ़ रखा गया।

प्रभु द्वारिकाधीश संवत् 1776 में चैत्र कृष्ण की नवमी को नए मन्दिर में विराजित किये गये। तत्पश्चात् इस मन्दिर में समय–समय पर सुधार किये गये और संवत् 1980 में यह बनकर पूर्ण हुआ। यह नया मन्दिर राजसमन्द झील के तट पर एक उत्कृष्ट स्थान पर स्थित है एवं देश के कोने–कोने से हजारों लोग यहाँ प्रतिदिन दर्शन एवं भ्रमण के लिए आते हैं।

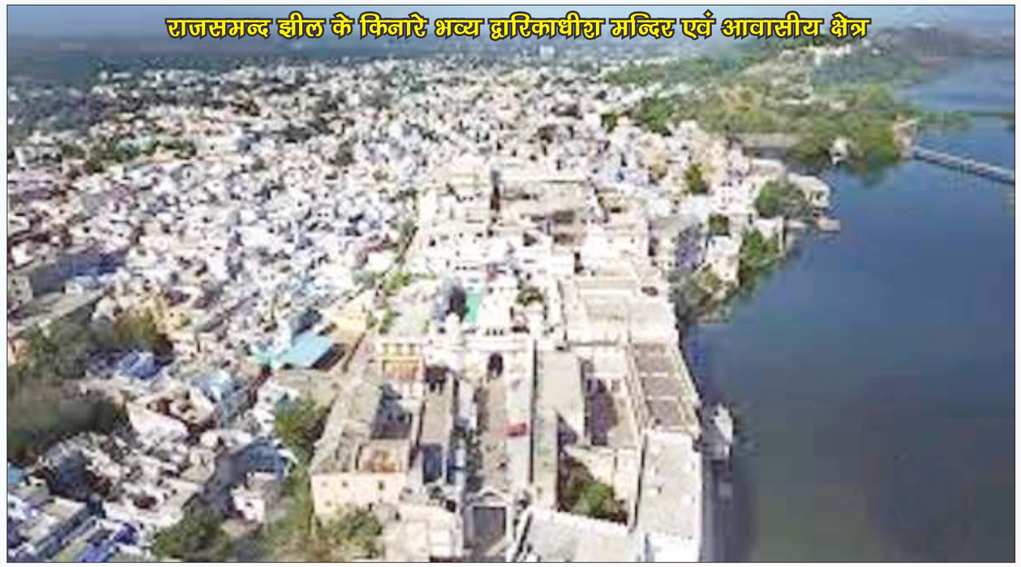
राजसमन्द झील के किनारे भव्य द्वारिकाधीश मन्दिर एवं आवासीय क्षेत्र

द्वारिकाधीश मन्दिर से सटे घाट पर श्रद्धालुजन

राजसमन्द झील के साथ पूर्वी पाल का विशाल स्वरूप

राजसमन्द झील : द्वारिकाधीश मन्दिर से झील की विशालता का मनोहारी दृश्य

समीक्षा एवं सुझाव :

- शुद्ध पेयजल की यह झील वर्तमान राजसमन्द के लिए पेयजल एवं यहां के टायर और मार्बल उद्योगों के लिए जल का एकमात्र स्रोत है।
- जल की आवक झील के आकार एवं पेयजल की मांग से कम है। अतः इससे वर्तमान में सिंचाई के लिए जल आपूर्ति में बाधा आ रही है।
- अल्पवृष्टि में यह झील पूर्णतया सूख भी जाती है। इसलिए इसके जल संरक्षण, उपभोग नियंत्रण एवं क्षमता का अभिवर्द्धन आवश्यक है।
- इस झील में पानी की आवक बढ़ाने हेतु बनास नदी पर स्थित नन्दसमन्द बाँध से एक फीडर जिसका नाम खारी फीडर है, उसकी 11.4 क्यूमेक्स पानी ले जाने की क्षमता है, का निर्माण 50 वर्ष पूर्व किया गया।
- इस फीडर का पुनर्निर्माण कर इसकी क्षमता 30 क्यूमेक्स करने से बनास नदी का काफी पानी इसमें डायवर्ट किया जा सकेगा।
- मार्बल और टायर उद्योगों द्वारा जल मितव्ययता तकनीक अपनायी जानी वांछित है।
- पाल के तीनों खण्डों में निश्चित स्थान पर आर्च (तोरण) का पुनर्निर्माण आवश्यक है।

राजसमन्द झील – वर्तमान स्वरूप एवं विकास की संभावनाएँ : स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद मेवाड़ विरासत की विशाल कलात्मकता की मिसाल इस अद्वितीय झील की पाल की नौ–चौकी माउन्ट आबू के देलवाड़ा मन्दिर एवं रणकपुर के जैन मन्दिर से कलात्मक एवं पुरातत्व दृष्टि से समकक्ष हैं, लेकिन प्रशासनिक अधिकारियों, राजनेताओं, उद्योगपतियों एवं स्थानीय नागरिकों का इसके समुचित विकास एवं सौन्दर्यीकरण कोई ध्यान नहीं गया तथा इसके रख–रखाव पर भी विशेष शिथिलता रही। झील में उपलब्ध जल के उपयोग पर सभी की दृष्टि रही, शायद आवश्यकता के फलस्वरूप। काश! निम्न बातों पर ध्यान दिया गया होता, तो आज दुनिया की इस बेमिसाल कलाकृति को देखने देश से ही नहीं, विदेश के पर्यटकों को भी भारी संख्या में यह झील यहाँ खींच लाती।

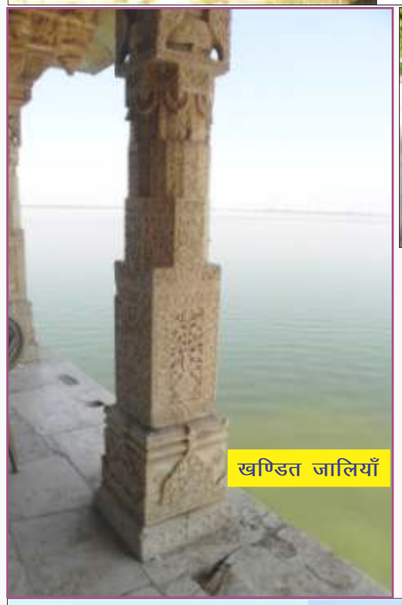

- झील की नौ–चौकी पाल पर पिछले वर्षों में विश्राम भवन, जलदाय विभाग का पम्प हाउस, पानी की टंकियां आदि बना दी गयी। फलस्वरूप इसका स्वरूप बिगड़ा। झील के पर्यटन एवं पुरातत्व महत्व को ध्यान में रखते हुए ये अन्य स्थान पर भी निर्मित किये जा सकते थे। जलदाय विभाग का पम्प हाउस एवं टंकियों का उपयोग शायद नहीं हो रहा हैं, अतः इन्हें इस दर्शनीय स्थल से विश्राम भवन के साथ हटा लेने चाहिये।
- झील पर स्थित नौ–चौकी का पुरातत्व एवं पर्यटक स्थल के रूप में विकास नहीं हो पाया।
- छतरियों (मण्डप) के तीनों तरफ लगी संगमरमर की जालियाँ (गहरे पानी से जन सामान्य के रक्षार्थ) एवं टूटे हुए तोरण द्वार पुरातत्व विभाग के मार्गदर्शन में कुशल कारीगरों द्वारा पुनःनिर्माण पर चिंतन व मनन नहीं किया गया। नौ–चौकी पर उपयोग किया गया मार्बल राजसमन्द की अनेक खानों में अभी भी उपलब्ध है, राजसमन्द में ऐसे समाजसेवी मार्बल व्यवसायी मिल जायेंगे जो यह कार्य प्रसन्नतापूर्वक करने में गौरवान्वित महसूस करेंगे।

- नौ–चौकी पाल के पश्चिमी छोर पर बने राजमहल को राजसमन्द के संग्रहालय के रूप में विकसित किया गया है। नौ–चौकी पाल बहुत विस्तृत एवं व्यवस्थित रूप से वृत्ताकार, तोरणद्वार एवं छतरियों पर कलाकृतियों जिनमें रामायण, देवताओं एवं प्राकृतिक स्वरूप के अनेक दृष्टांगों का बहुत सुन्दर खुदाई द्वारा चित्रण किया गया है। इसके स्वरूप को संग्रहालय में चित्रों के माध्यम से पूर्ण टिप्पणियों के साथ दर्शाया जाना चाहिये। इसके अतिरिक्त मेवाड़ का इतिहास जो 25 संगमरमर स्लेब (1105 छन्द/पद) पर खुदा हुआ है (राज–प्रशस्ति के नाम से पुकारा जाता है), उसे

उसी स्वरूप में हिन्दी/अंग्रेजी में अनुवाद के साथ दर्शाये जा सकते है। पहाड़ी पर बने महलों का इतिहास के अनुरूप ही रखरखाव आवश्यक है। पर्यटकों के लिए मार्ग भी सुगम होना चाहिये। इस महत्वपूर्ण कार्य में राज्य सरकार, पुरातत्व विभाग, स्थानीय समाज समर्पित उद्यमियों, मार्बल व्यवसायियों आदि का सहयोग लिया जा सकता है।

- राजसमन्द शहर के मुख्य मार्ग से राजसमन्द झील तक का स्थानीय मार्ग अव्यवस्थित रूप से बसे हुए आवासीय भवनों के कारण बहुत संकड़ा सा रह गया है। पर्यटकों की बड़ी बस का झील तक पहुँचना कठिन है। इसके अतिरिक्त झील के प्रथम प्रवेश द्वार पर अन्ध मुड़ाव एवं जलदाय विभाग का कार्यालय एवं आवासीय भवनों का निर्माण कर दिया गया है। उपरोक्त निर्माण शहर में उपलब्ध अनेक सरकारी रिक्त पड़ी भूमियों पर किये जा सकते थे। तदर्थ प्रारम्भ से ही इस राष्ट्रीय एवं पुरातत्व महत्व की नौ–चौकी पाल एवं झील पर ध्यान नहीं दिया गया।

- राजसमन्द झील के दक्षिणी–पूर्वी छोर (कांकरोली) की पाल बहुत लम्बी है, जिस पर अनेक घाट बने हुए हैं। इसी प्रकार नौ–चौकी पाल पर जल सतह तक पहुंचने के लिए कलात्मक एवं एक निश्चित प्रारूप के अनुसार सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। वर्तमान में घाट एवं सीढ़ियाँ नहाने व कपड़े धोने के लिए उपयोग में लिए जा रहे हैं। झील का पानी, राजसमन्द एवं आसपास के गाँवों का मुख्य पेयजल स्रोत है। अतः शहरवासियों को प्रारम्भ में मनाव एवं गांधीगिरी के साथ नहाने–कपड़े धोने आदि हेतु रोकने के प्रयास करने चाहिये। नहीं मानने पर कानूनी सहायता लेना भी इस झील के पर्यटन एवं पुरातत्व महत्व को ध्यान में रखते हुए आवश्यक है।

- नौ–चौकी झील पर प्रवेश टिकिट से ही संभव होना चाहिये। जिससे यह झील नहाने–कपड़े धोने, असामाजिक व्यक्तियों के लिए विश्राम स्थल,

पशुओं का चारागाह नहीं बन सके। कलात्मक मूर्तियाँ भी असामाजिक तत्वों द्वारा खण्डित व चोरी न हो, इस हेतु झील पर 24 घण्टे पर्याप्त सुरक्षा व्यवस्था नगर परिषद् अथवा पुरातत्व विभाग के द्वारा की जानी चाहिये। वर्तमान में यहाँ पर सुरक्षा के नाम पर कोई भी व्यवस्था नहीं है।

पाल पर पशुओं का मुक्त विचरण

- नौ–चौकी के पूर्वी पहाड़ पर स्थित जैन धर्मावलम्बियों के दयालशाह जैन तीर्थ के पास पूर्व दिशा में उपलब्ध रिक्त भूमि को समय के साथ अनेक संस्थाओं, प्रशासनिक विभाग, वन विभाग, जलदाय विभाग आदि को अपने कार्यालय, जल शुद्धीकरण यंत्र, नर्सरी आदि निर्माण के लिए आवंटित कर दी गयी। काश! यह भूमि इस झील को सौन्दर्यीकरण एवं इसकी भव्यता को निखारने के लिए सुन्दर स्थल एवं, उद्यान निर्माण हेतु आरक्षित कर दी जाती। जलदाय विभाग के अतिरिक्त सभी संस्थाओं, विभागों को अन्य स्थान पर भूमि आवंटित की जा सकती थी। राजसमन्द में इस हेतु भूमि की उपलब्धता में कोई कठिनाई नहीं थी।

पाल के पूर्वी छोर पर निर्मित दयालशाह जैन तीर्थ एवं अन्य धार्मिक एवं प्रशासनिक संस्थाएँ

- काश! इस ऊँचे स्थान को उदयपुर में दूध तलाई स्थित माणिक्यलाल वर्मा एवं दीनदयाल स्मृति उद्यान के रूप में विकसित किया जाता अथवा उदयपुर के फतहसागर स्थित प्रताप स्मारक के तर्ज पर राजा राजसिंह की स्मृति स्वरूप विकसित किया जाता। वर्तमान परिस्थितियों में भी मान–मनवार के साथ यह कार्य किया जा सकता है। इससे राजसमन्द झील के पर्यटक महत्व के साथ ही दयालशाह किले पर स्थित तीर्थंकर आदिनाथ जैन मन्दिर का दर्शनीय महत्व कई गुणा बढ़ जायेगा।

- नौ–चौकी पाल स्थित तीसरी छतरी (मण्डप) के मध्य संगमरमर से बनी छोटी बावड़ी का रख–रखाव बड़ा दयनीय है। इसे कचरा डालने (गुटखे, सिगरेट, बीड़ी आदि के पैकेट), पान–गुटखा पीकदान एवं सुविधा कक्ष के रूप में उपयोग किया जा रहा है। इस बावड़ी का अपना इतिहास है। उसे पट्ट के माध्यम से दर्शाने के साथ साफ–सुथरा रखने की व्यवस्था प्राथमिकता से की जावे।

नौ-चौकी पर स्थित संगमरमर से निर्मित लघु बावड़ी

- नौ–चौकी पाल की सतह का करीब आधा भाग वीरान जंगल के रूप में विद्यमान है, यह सोचनीय है। पम्प हाउस, विश्राम भवन को हटाकर, संपूर्ण पाल की सतह को आधुनिक बगीचे के रूप में विकसित की जानी चाहिये। इस बगीचे के उपयुक्त स्थल पर महाराणा राजसिंह की आदमकद मूर्ति स्थापित की जानी चाहिये।

झील की पाल पर स्थित विरान जंगल - इसे एक सुन्दर बगीचे के रूप में विकसित किया जा सकता है।

राजसमन्द झील की संगमरमर युक्त नौ-चौकी मुख्य पाल से सटी हुई मिट्टी की पाल को और भी सुन्दर, आकर्षक एवं पर्यटकों हेतु सुविधायुक्त बनाया जा सकता है।

- नौ–चौकी पाल का मात्र दर्शनीय एवं पुरातत्व महत्त्व के रूप में उपयोग हो।
- राजसमन्द झील के पूर्वी पहाड़ी के अंतिम छोर के पास में एक टापू स्थित है। इस टापू को उदयपुर के फतहसागर स्थित नेहरू गार्डन के रूप में विकसित किया जाये। यह निर्माण जनता के सहयोग से (पीपीपी मोड पर) भी विकसित किया जा सकता है।
- झील के पश्चिमी एवं दक्षिणी छोर पर हो रहे अतिक्रमणों को नियमित रूप से हटाये जाये। पिछले 42 वर्षों में झील की मात्र तीन बार ही चादर चली। दो बार करीब 20 फीट, 3 बार करीब 13–15 फीट एवं 6 बार 5 फीट से कम पानी आया। इस तरह झील करीब–करीब खाली रही तथा पेटा खाली होता रहा, अतिक्रमण व्यापक रूप से हो रहे हैं, झील के पेटे में, क्षेत्र विशेष पर संगमरमर पत्थरों से चार दीवारी बनाकर स्थायी अतिक्रमण हो रहा है। इसे समय पर रोकना आवश्यक है।

झील में स्थित इस टापु को नेहरू गार्डन के रूप में विकसित किया जा सकता है।

झील के दक्षिणी-पश्चिमी छोर पर अतिक्रमण के प्रयास को रोकने हेतु समुचित प्रयास आवश्यक है।

- झील की जीवन रेखा खारी फीडर के रखरखाव पर भी पूर्ण ध्यान देने की आवश्यकता है। इसके दोनों ओर सेवा मार्ग (सर्विस रोड) को अतिक्रमण से मुक्त रखा जाये। फीडर में मार्बल भराव एवं संगमरमर के टुकड़े डाले जा रहे हैं। इससे जल बहाव की गति धीमी होती है। मार्बल उद्योग जगत एवं प्रशासन को इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिये।

खारी फीडर की समुचित साफ-सफाई एवं नियमित रखरखाव के साथ फीडर के दोनों ओर एक व्यवस्थित निरीक्षण पाथ-वे का निर्माण किया जाना आवश्यक है।

- झील के लम्बे चादर स्थल को ओर अधिक छतरियाँ बनाकर, व्यवस्थित रूप से निर्मित किया जाना चाहिये। वर्षा के पूर्व झील के किनारों को झाड़ियों एवं खरपतवार मुक्त करने के साथ किनारों से व्यवस्थित रूप से किसान व ईंट बनाने वाले उद्यमियों को मिट्टी निकालने की स्वीकृति दी जाये। इससे झील के जल संग्रहण क्षमता में वृद्धि होगी।
- झील के पूर्ण भराव स्तर पर सिंचाई के लिए पानी निकासी के लिए बने गेट उच्च स्तर के हो। वहाँ से पानी नियमित रूप से नहीं बहे।
- झील के दक्षिणी–पूर्वी भाग में स्थित लम्बी पाल जहाँ सिंचाई विभाग का कार्यालय है, उसे प्रत्येक दिन प्रातः एवं सायंकाल भ्रमण एवं कुछ स्थान को चौपाटी के रूप में विकसित किया जाये। कांकरोली एवं राजनगर शहर में, राजसमन्द झील एक मात्र दर्शनीय एवं स्थानीय जनमानस के लिए मनोरंजन स्थल भी है। अतः बहुत व्यवस्थित सौन्दर्य से भरपूर स्थल का विकास यहां संभव है।
- कांकरोली में द्वारकाधीश का प्रसिद्ध मन्दिर स्थित है। इस मन्दिर से लगे हुए घाटों का विकास, उच्च स्तर के नियोजन एवं उत्तम टिकाऊ पत्थरों से विकसित किया जाये। यहाँ परम शांति एवं सुकून के केन्द्र स्थापित हो।

अन्त में, राजसमन्द जिला बनने के बाद, इस पुरातत्व महत्व की बेमिसाल झील को संरक्षित एवं पूर्ण विकास की ओर, सबका अर्थात् प्रशासनिक अधिकारियों, नियोजनकर्त्ताओं, राजनेताओं, प्रसिद्ध उद्योगपतियों एवं समाजसेवियों का ध्यान जाना चाहिये।

गोमती नदी : राजसमन्द जिले में तासोल पुलिया के ऊपर बहती गोमती नदी का पानी राजसमन्द झील में समाहित होने के लिए आगे बढ़ता हुआ। राजसमन्द झील भरने में गोमती नदी का बहुमूल्य योगदान है। इस नदी के जल संरक्षण क्षेत्र में एनिकट आदि बनाने में पूर्ण सावधानी से स्वीकृति देनी चाहिये।

ओवरफ्लो स्थल, इसे व्यवस्थित रूप से विकसित किया जाना चाहिये।

इस वृहद् पाल को चौपाटी के रूप में विकसित किया जा सकता है

द्वारिकाधीश मन्दिर के छोर पर स्थित पाल का वृहद् स्वरूप

गोमती नदी का बहता स्वरूप

पाल पर स्थित नौ–चौकी एवं रिक्त झील का पूर्ण स्वरूप

छलकती झील है या नौचौकी आँसुओं का सैलाब : राजसमन्द नगर के वयोवृद्ध शिक्षक, रचनाधर्मी, मूलग्राही, लेखक–चिन्तक चतुर कोठारी के साथ कुछ ही दिन पहले नौचौकी पर गुजारी शाम सभवतः मेरे लिए एक साथ सुखी, दुःखी, क्रोधित, हैरान, परेशान, निराश और हताश होने के साथ–साथ चमत्कृत और रोमांचित होने का अवसर थी, जब एक खूबसूरत और भव्य शास्त्रीय लोक रुचि सापेक्ष कल्पना के वस्त्रों को चीर कर न केवल तार–तार करने के दुष्ट प्रयत्नों की शृंखलाबद्ध निशानियाँ राणा राजसिंह की इस मनोहारी कृति में स्थान–स्थान पर देखने और आँसू बहाने को मिली बल्कि पुरातत्व, नल जल, सार्वजनिक निर्माण, सिंचाई व नगर नियोजन के अथक प्रयासों के परिणामस्वरूप मैंने संगमरमर के पत्थरों में छिपे साज संगीत को बेसुरा होता पाया। मोर के पैरों में सोने की पैंजनियाँ पहनाने से जैसे उनमें महारास की शक्ति पैदा नहीं की जा सकती है, वैसे ही रंग–बिरंगी विद्युतमालिकाओं और उघड़ी दीवारों पर पैबन्द लगाने से इस पर्यटन स्थल पर हुए अत्याचार को छिपाया नहीं जा सकता। जिम्मेदार कौन का यक्ष प्रश्न करने वाले जीवन के आठ दशकों के अनुभव से अब थकी–थकी लग रही बुजुर्ग शिक्षक चतुरजी की दर्द भरी आँखों को तब पढ़ने का साहस मैं नहीं जुटा पाया। नौचौकी के नयनाभिराम सौन्दर्य को द्विगुणित करने वाली तीनों छतरियों को सुरक्षा प्रदान करने वाली बारीक कलाकृतियों से मन मोहने वाली जालियाँ बचपन में हमें नीचे पानी में नहीं गिरने देने का अभयदान देती थीं, अब नदारद हैं। वे जिन खड्डों में रोपी गई थीं, वहाँ स्थित वे खड्डे आज भी कभी उनके होने का प्रमाण दे रहे हैं। अब जब वहाँ झील का जल छतरी के लेवल पर है, लोहे की कमजोर तार लगा सुरक्षा का घेरा बना देने मात्र से उस कलुष को कैसे मिटाया जा सकता है, जो उस ज्ञानवृद्ध शिक्षक के प्रश्न के मूल में हैं। जिम्मेदार कौन?

इन छतरियों के क्षत–विक्षत किनारे, छह तोरण द्वारों में कुछ 'काल कवलित' और शेष वर्तमान में अपने 'अंग–भंग' शिल्प द्वारा धरोहर संरक्षकों की सुरक्षा और इस पर सेंध मारने वाले कृतघ्नों की गैर जिम्मेदाराना हरकतों पर आँसू बहाते नजर आते हैं। ऐसे संभावित आपराधिक कृत्य को यों हवा में उछाल कर भूल जाना, इस ऐतिहासिक धरा के साथ खिलवाड़ नहीं तो और क्या है?

'राज–प्रशस्ति' जैसे विश्व–प्रसिद्ध शिलालेखों की टूटी जालियाँ, इनकी दीवारों पर उग आये झाड़–झंखाड़, इन शिलाओं पर ठोकी गई कीलियाँ, धुँधली पड़ रही लिपियों पर बदरंग लकीरें–लगता नहीं, हम इन्हें बचा पाएंगे। पूर्वजों का धिक्कार तो हम पा ही रहे हैं, जब घेवर माताजी के मन्दिर के बाहर पहाड़ी के नीचे खण्डहर में साँप–बिच्छू, जंगली घास और गन्दगी से अटे एक ढाँचे के भीतर के 'आले' में राज–प्रशस्ति की एक महत्वपूर्ण शिला की दुर्दशा को देखा तो लगा कि सभी इतिहास प्रेमी, साहित्य और शास्त्रीय परम्परा से लबरेज नगरवासी होने का मुखौटा उतारकर एक बार इस खोह में अंतिम साँस गिनती शिला को देखें, अपने महान परम्परा के वाहक होने का दम्भ चूर–चूर हो जाएगा।

नौचौकी पर स्थित बालोद्यान के ठीक पीछे सरवरा मैदान से ऊपर एक विशाल भू–भाग (पाल) झाड़ियों, गड्ढों और पथरीले कंटकाकीर्ण मैदान पहाड़ी उबड़–खाबड़ जमीन नौचौकी के खूबसूरत चेहरे पर बदनुमा दाग है। इसके उद्धार की योजनाएँ अतीत के अंधकार का हिस्सा है। प्रश्नों की शृंखला का अंत नहीं है। बुजुर्ग जीवन के उत्तरार्द्ध में भी अनन्त जिजीविषा को चेहरे पर ला जगह–जगह दीवारें पर थूकी पान की पीकों के अवलोकन के साथ झील प्रेम के ताश के पत्तों के महल भरभरा कर गिरते हुए दिखाकर चतुर कोठारी ने मानो हम सब अरण्यरोदन करने वाले तथाकथित 'विदों' को कटघरे में ला खड़ा किया। अकूत शिल्प संपदा तो 'बिना मोल बिकने' को खुले आसमान के नीचे जैसे पड़ी आमंत्रण दे रही हैं, नौचौकी ही क्यों, रूठी रानी का महल, राजमहल से घिरा वन क्षेत्र और असुरक्षित, असंरक्षित, अतिक्रमण, जलदोहन, मिट्टी दोहन की शिकार झील का पानी, सबके अरमानों की प्यास बुझा पायेगी, प्रश्न है। आवश्यक है, आत्म–मुग्धता और गौरवान्वित होने की आदत हम अब छोड़ दें, क्योंकि उस लायक जन, गण, मन और गणनायकों ने अपने आपको छोड़ा नहीं।

राणा राजसिंह पेनोरामा यदि हमारा मुख है तो उसका पृष्ठ भाग भी उतना ही समानान्तर विकास का हकदार है। नौचौकी का समग्र विकास हो, उससे पूर्व इसके मूल स्वरूप जो इसके अवशेषों के माध्यम से अपने उद्धार के लिए चीख–पुकार मचा रहे हैं, की ओर कृपा दृष्टि हो। ऐसा न होने पर आधी–अधूरी नौचौकी को अपनी करतूतों की काली कामली में छिपा कर हम किस कंदरा में जाकर धुनी रमा पाएंगे, नहीं मालूम।

– डॉ. राकेश तैलंग

तीन बार छलकी राजसमन्द झील : विगत करीब 48 वर्ष में राजसमन्द झील मात्र तीन बार छलकी। पहली बार वर्ष 1973 में चादर चली थी। दुबारा छलकने के लिए दो वर्ष का इंतजार करना पड़ा। अच्छी वर्षा से 1975 में यह ओवरफ्लो हुई। वर्ष 1994 में भी छलकने के आसार बने, लेकिन झील मात्र दो फीट खाली रहने से यह आस पूरी नहीं हो सकी थी। झील ने अपने पौने चार सौ साल के इतिहास में बुरे दिन भी देखें। वर्ष 2001 में भयंकर अकाल पड़ा और झील पूरी तरह से सूख गई। 4 सितम्बर, 1973 की झील एक ही रात में भारी बारिश के कारण छलक गई थी। वर्ष 2017 में यहीं मौका आया, लेकिन पानी में उफान नहीं था। ठहराव के साथ एक–एक मिलीमीटर पानी बढ़ रहा था। गोमती नदी और खारी फीडर से पानी की लगातार आवक से 12 सितम्बर, 2017 को ऐतिहासिक राजसमन्द झील फिर से छलक गई। अगले चार वर्षों में यह अवसर पुनः नहीं आया। अतः इस ऐतिहासिक झील को सुरक्षित एवं संरक्षित रखने के साथ इसकी सुन्दरता एवं पर्यटक महत्व को बनाये रखने एवं इसे सदैव पानी से भरा रखने हेतु अतिरिक्त जल स्रोत से जोड़ना अत्यन्त आवश्यक है।

राजसमन्द झील का गेज (फीट में)

वर्ष	गेज	वर्ष	गेज
2006	19.50	2012	15.80
2007	15.20	2013	03.60
2008	00.20	2014	03.30
2009	-06.50	2015	02.50
2010	04.00	2016	20.40
2011	13.50	2017	30.00

स्रोत : जल संसाधन विभाग, राजसमन्द

वर्ष 1973 में झील के पूर्ण भराव स्तर का मनोहारी स्वरूप

वर्ष 2017 में झील के पूर्ण भराव स्तर का विहंगम स्वरूप

वर्ष 1973 में लबालब हुई राजसमन्द झील पर चली चादर

झील के पूर्ण भराव स्तर पर जलप्लावित छतरियाँ

राजसमन्द झील के पूर्ण भराव स्तर पर पानी मण्डप के तल को स्पर्श करते हुए

वर्ष 2017 में झील पर चली चादर का मनोहारी दृश्य

राजसमन्द के अन्य महत्त्वपूर्ण जल स्रोत

बाघेरी का नाका : बनास नदी पर निर्मित 32.8 फीट भराव क्षमता वाला यह बाँध राजसमन्द एवं उदयपुर जिले के क्रमशः 292 एवं 20 गांवों में पेयजल आपूर्ति के लिए समर्पित है। इसकी जल भंडारण क्षमता 350 एमसीएफटी है। 204.59 करोड़ रुपये लागत की इस वृहद् योजना का शिलान्यास वर्ष 2003 में हुआ तथा मात्र तीन वर्ष यानी वर्ष 2006 में यह बनकर तैयार हो गया एवं उसी वर्ष छलकने के साथ पेयजल की आपूर्ति भी होने लग गई।

यह बाँध पिछले 16 वर्षों के इतिहास में 14 बार छलका तथा केवल वर्ष 2008 एवं 2009 में कमजोर मानसून के कारण यह ओवरफ्लो नहीं हुआ। पेयजल आपूर्ति की दृष्टि से यह बाँध काफी महत्त्वपूर्ण होने के साथ एक सकारात्मक कदम साबित हुआ है। इस बाँध के ओवरफ्लो का पानी नन्दसमन्द बाँध में जाता है जिसका पानी सिंचाई के साथ खारी फीडर के माध्यम से राजसमन्द झील को भरने के लिए भी उपयोगी है। वर्तमान में यह बाँध पेयजल आपूर्ति के साथ आमजन एवं पर्यटकों हेतु पिकनिक स्थल के रूप में भी विकसित हो गया है।

ओवरफ्लो वर्ष एवं दिनांक	
वर्ष 2006	छलका
वर्ष 2007	छलका
वर्ष 2008	नहीं छलका
वर्ष 2009	नहीं छलका
वर्ष 2010	छलका, 27 जुलाई
वर्ष 2011	छलका, 17 अगस्त
वर्ष 2012	छलका, 29 अगस्त
वर्ष 2013	छलका, 18 अगस्त
वर्ष 2014	छलका, 27 अगस्त
वर्ष 2015	छलका, 27 अगस्त
वर्ष 2016	छलका, 18 जुलाई
वर्ष 2017	छलका, 22 जुलाई
वर्ष 2018	छलका, 29 जुलाई
वर्ष 2019	छलका, 16 अगस्त
वर्ष 2020	छलका, 24 अगस्त
वर्ष 2021	छलका, 4 अक्टूबर

प्रतिवर्ष जैसे ही इस बाँध पर चादर चलना शुरू होती है, लोगों की आवाजाही बढ़ जाती है। चादर देखने, बहते पानी में स्नान एवं अठखेलियाँ करने के लिए न केवल राजसमन्द बल्कि उदयपुर से भी स्थानीय लोगों एवं पर्यटकों की खासी भीड उमड़ती हैं। रविवार या अवकाश के दिन इस प्राकृतिक एवं भाव–विभोर दृश्यावली को देखने वालों का भारी तांता लगा रहता है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि जितने दिन इसकी चादर चलती है, उतने ही दिन यहाँ पर मेले का माहौल रहता है।

इस पर्यटन स्थल के समुचित रख–रखाव, साफ–सफाई एवं पर्यटकों हेतु गुणवत्तायुक्त खाद्य पदार्थों की उपलब्धता की ओर न तो सार्वजनिक स्वास्थ्य एवं अभियांत्रिकी विभाग, न पर्यटन विभाग, न ही नाथद्वारा नगर परिषद् का ध्यान गया है। पर्यटकों एवं स्थानीय नागरिकों द्वारा खुले में शौच–मूत्र त्याग करना एक मजबूरी है क्योंकि इस पर्यटन स्थल पर कोई भी 'सुविधा कक्ष' नहीं बनाया गया है। रपट क्षेत्र की तलहटी में गड्ढ़ों एवं टूट–फूट की मरम्मत भी नहीं करायी जा रही हैं। बांध के पास सार्वजनिक स्वास्थ्य एवं अभियांत्रिकी विभाग का पम्प हाउस, जल शुद्धीकरण संयंत्र के साथ विश्राम स्थल भी बना हुआ हैं। बाँध पर आने वाले पर्यटकों को बाँध को ऊपर से निहारने हेतु सशुल्क अनुमति होनी चाहिये। यहां पर एक दर्शक–दीर्घा बनाई जानी चाहिये, जहाँ सुविधाएँ, पेयजल एवं खाद्य पदार्थ भी सुगमता से उपलब्ध हो सकें।

Bageri Ka Naka Storage Reservoir

Name of River	:	Banas
Year of Foundation	:	2003
Year of Completion	:	2006
Gross Catchment Area	:	220.81 sq.miles
Storage Capacity	:	311.68 mil.ltr.
Seal Level	:	649.50 m.
Full Tank Level	:	659.50 m.
Top Back Level	:	665.10 m.
Flood Laft	:	4.10 m.

From : Water Resources Deptt., Govt. of Rajasthan

बाघेरी का नाका बाँध : अरावली की पहाड़ियों के मध्य संचित अथाह जलराशि का सुरम्य दृश्य यह बाँध 312 गाँवों में पेयजल का मुख्य स्रोत है।

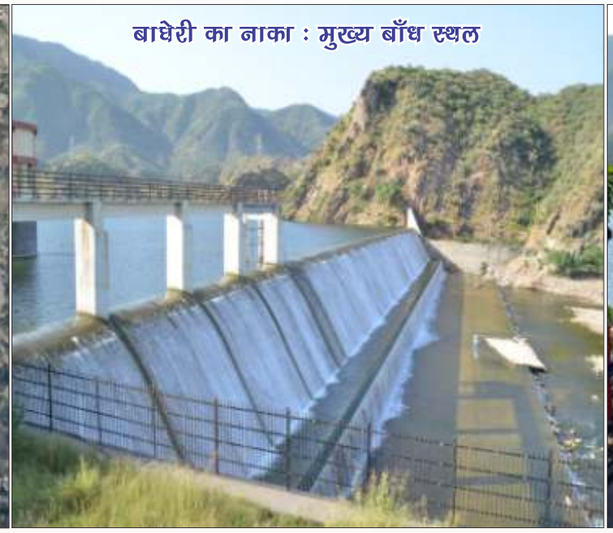

बाघेरी का नाका : मुख्य बाँध स्थल

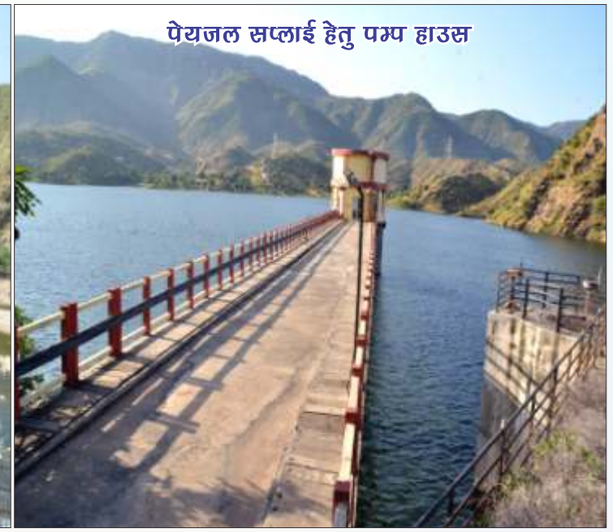

पेयजल सप्लाई हेतु पम्प हाउस

बाघेरी का नाका : मुख्य बाँध की रपट से छलकते पानी का रोमांचक दृश्य

बाघेरी का नाका बाँध पर वर्षा ऋतु के दौरान बहते पानी में जल-क्रीड़ा करते हुए जन-मानस

नन्दसमन्द बाँध : नाथद्वारा से खमनोर मार्ग पर गंगा बेसिन की बनास नदी पर टांटोल गाँव के पास मध्यम सिंचाई परिजना के अन्तर्गत निर्मित यह बाँध नाथद्वारा के लिए पानी का बड़ा स्रोत है। इस बाँध का निर्माण 1957 में किया गया। यह टांटोल बाँध के नाम से ज्यादा प्रसिद्ध है। इस बाँध से सिंचाई के अतिरिक्त जल दिशा–परिवर्तन कर खारी फीडर के माध्यम से राजसमन्द तालाब को भरा जाता है। यहाँ के सूर्यास्त एवं सूर्योदय के समय के दृश्य बहुत ही आकर्षक एवं सुरम्य होते हैं।

इस बाँध की पाल पर पैदल चलने पर एक बड़ा अज़ीब सा अनुभव होता है, खासतौर पर जब यहाँ पर पानी भरा हुआ होता है। दूर–दूर तक दिखाई देते हुए पानी की ओर देखकर जब पाल की तरफ अपनी नजर घुमाते हैं तो लगता है कि यह पाल खासी लम्बी एवं मजबूत हैं। यह मिट्टी एवं पत्थरों की चुनाई द्वारा मजबूती से बनाया हुआ बाँध है। इसके पाल की कुल लम्बाई 1292 मीटर है एवं नींव से 18.38 मीटर ऊँचा है। इस बाँध के पूर्ण भराव स्तर पर 10 स्पिलवे गेट्स के द्वारा पानी को बनास नदी में छोड़ा जाता है।

प्रत्येक गेट का आकार 3 × 2.5 मीटर है। बाढ़ स्तर पर बहाव क्षमता 9287 क्यूमेक है। बाँध के उत्तरी दिशा में बने हुए 33 गेट खोलकर बड़ी नहर से सिंचाई एवं खारी फीडर के द्वारा पानी को राजसमन्द तालाब को भरने के लिए प्राकृतिक बहाव के साथ दिशा–परिवर्तन कर छोड़ा जाता है। यह नहर 1962 में 1.36 करोड़ रुपये की लागत से पूर्ण हुई।

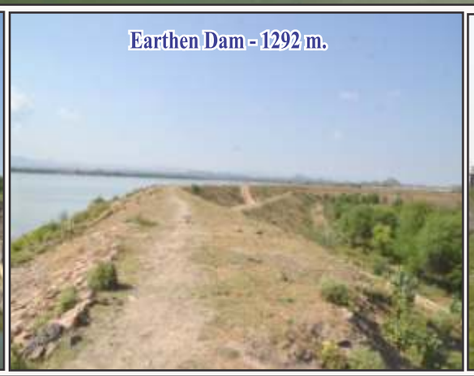

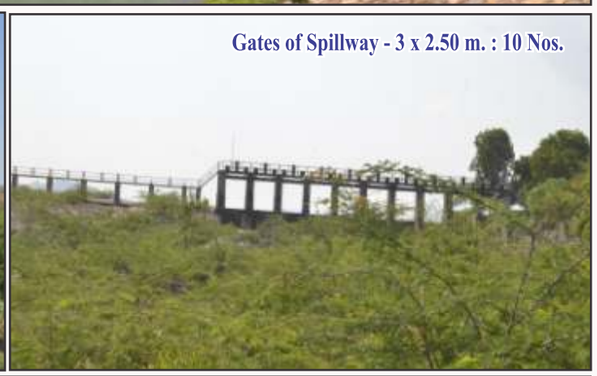

Nand Samand Dam - Salient Features

Name of River	: Banas
Year of Completion	: 1957
Gross Catchment Area	: 829 Sq.Km.
Av. Annual Rainfall	: 535 MM
Gross Storage	: 22.225 M.Cum.
Live Storage	: 20.631 M.Cum.
TBL/MWL/FTL in Mt.	: 584.30/582.00/581.25
Length of Waste Weir	: 153.00 Mt.
Gates of Spillway	
Gates of Size 3 x 2.50 Mt.	: 10 Nos.
Gates of Size 9 x 3.30 Mt.	: 33 Nos.
Flood Discharge	: 9287 Cumec.
Max. Height of Dam	: 18.38
Length of Canals	
RMC/LMC/Kharifeedar	: 29.40/1.14/32.40 Km.
Discharge at Head Canal	
RMC/Khari Feeder	: 5.66/11.32 Cumec
Irrigation IGCA/GCA/ICA	: 8702/7885/3255 Hact.
Number of Villages in com.	: 32 Nos.

From : Water Resources Deptt., Govt. of Rajasthan

Nandsamand Lake		
Year	Water Level (m.)	Date
1992	9.75	29.07.1992
1993	9.75	10.09.1993
1994	9.75	13.08.1994
1995	9.75	25.08.1995
1996	9.75	16.09.1996
1997	9.75	27.08.1997
1998	-	No Overflow
1999	-	No Overflow
2000	-	No Overflow
2001	9.75	12.07.2001
2002	-	No Overflow
2003	-	No Overflow
2004	-	No Overflow
2005	9.75	03.09.2005
2006	9.75	20.08.2006
2007	-	No Overflow
2008	-	No Overflow
2009	-	No Overflow
2010	9.75	13.08.2010
2011	9.75	07.09.2011
2012	9.75	04.09.2012
2013	-	No Overflow
2014	9.75	11.09.2014
2015	9.75	02.08.2015
2016	9.75	06.08.2016
2017	9.75	25.07.2017
2018	-	No Overflow
2019	9.75	26.08.2019
2020	9.75	31.08.2020
2021	-	No Overflow

इस बांध से फहपुरा, नाकली, फतहनगर का खेड़ा, मेंगटिया कला, भाटोली, तेजपुरा, राज्यावास, अमलोई, जोधपुरिया, फतहनगर एवं देवगांव की करीब 750 हेक्टयर भूमि सिंचाई की जाती है, जहाँ गेहूँ, जौ, रजगा, सब्जी, मैथी, चना आदि फसलें मुख्य रूप से बोई की जाती है।

नन्दसमन्द बांध पिछले 30 वर्षों में 18 बार छलक चुका है।

अमरजोक तालाब : इसे अमरचन्दिया तालाब के नाम से भी जाना जाता है। यह तालाब राजसमन्द जिले में नाथद्वारा से 40 किलोमीटर दूर स्थित गाँव तुला में स्थित है। इसका जलग्रहण क्षेत्र 11.65 वर्ग कि.मी. है। इसकी कुल भराव क्षमता 16 फीट है। जानकारों के अनुसार यह तालाब महाराणा प्रताप के ज्येष्ठ पुत्र महाराणा अमरसिंह जी ने बनवाया था। इस तालाब की पाल बहुत सुन्दर एवं व्यवस्थित बनी हुई है। यह तालाब चारों ओर से अरावली की पहाड़ियों की हरितिमा से घिरा हुआ है तथा पूर्ण भराव स्तर पर इसका स्वरूप बहुत मनमोहक होता है। राजसमन्द जिले में इसे एक पर्यटक स्थल के रूप में विकसित किया जाना चाहिये।

अमरचन्दिया (अमरजोक) तालाब	
स्थिति	उदयपुर से उत्तरी तरफ
निकटस्थ गांव/तहसील/शहर	तुला, तह. नाथद्वारा
देशान्तर	73°36'00'' पूर्वी देशान्तर
अक्षांश	24°51'10'' उत्तरी अक्षांश
नदी/नाला	बनास की सहायक
मुख्य बहाव क्षेत्र	बनास बेसिन
बाँध का प्रकार	चिनाई बाँध (दोनों तरफ दीवार)
शुद्ध जलग्रहण क्षेत्र	11.65 वर्ग किलोमीटर
सकल जलग्रहण क्षेत्र	11.65 वर्ग किलोमीटर
औसत वार्षिक जल आवक	1.04 एमसीएम
सकल जल भराव क्षमता	0.81 एमसीएम
शुद्ध जल भराव क्षमता	0.81 एमसीएम
पूर्ण टैंक गेज	4.88 मीटर/16 फीट
अधिशेष जल निकास व्यवस्था :	
– डिजाइन अधिकतम् प्रवाह	104.97 क्यूमेक
– वीयर का प्रकार व लम्बाई	बाय वॉश – 60.96 मी.
स्रोत : जल संसाधन विभाग	

अमरजोक तालाब : मुख्य बाँध एवं पाल की सुन्दर दृश्यावली

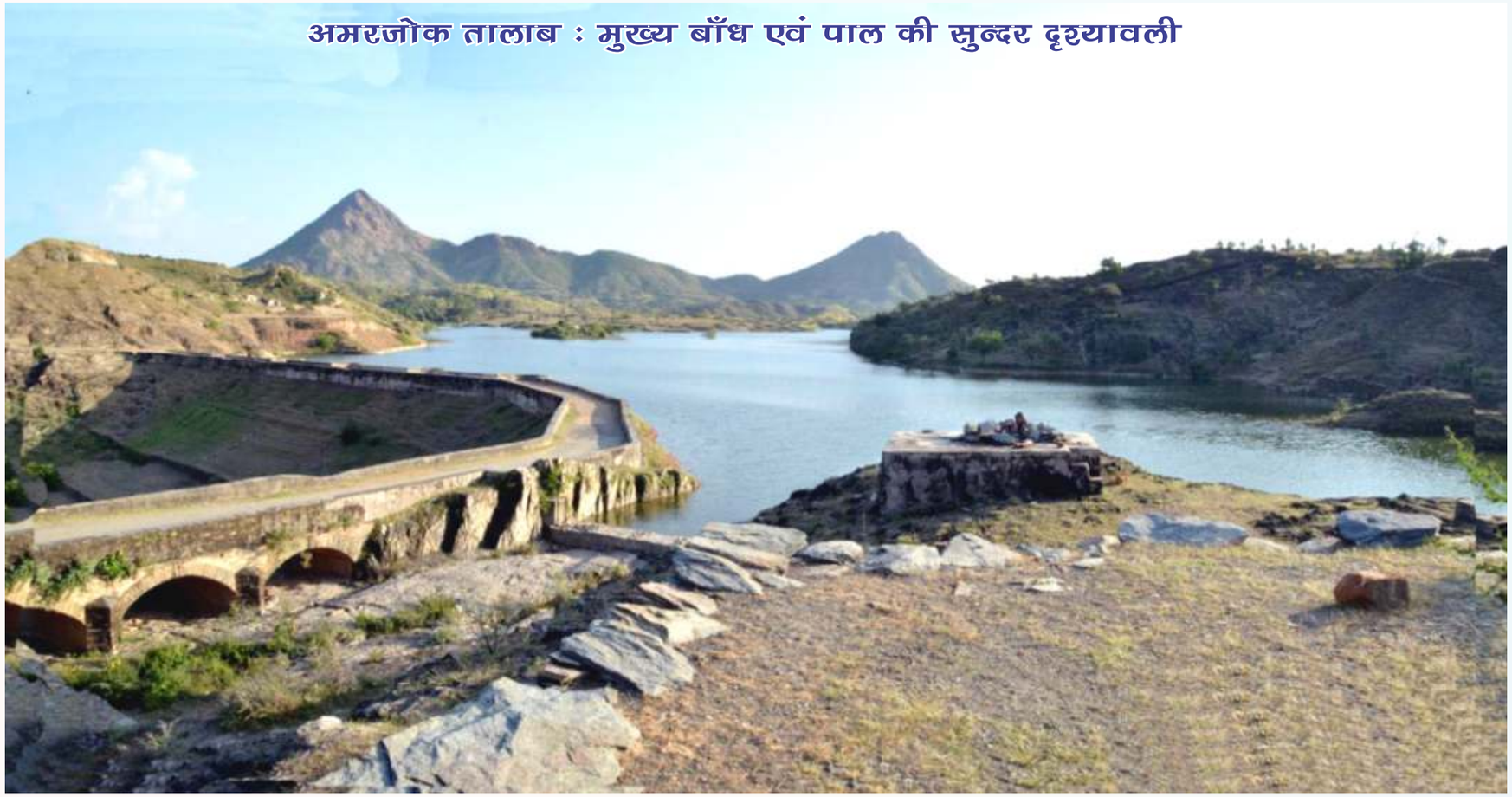

अमरजोक तालाब : प्रकृति की सुरम्य पहाड़ियों के मध्य शांत व शीतल जल का सुनहरा अहसास कराता है।

पक्की पाल